गांधी जन्म-शताब्दी प्रकाशन

महात्मा

गांधीजी के जीवन के प्रेरणादायक प्रसंग

•

सम्पादक
विष्णु प्रभाकर

•

१९६९
गांधी स्मारक निधि
सस्ता साहित्य मंडल
का संयुक्त प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल,
नई दिल्ली

पहली बार : १९६९
मूल्य
एक रुपया

मुद्रक
हिन्दी प्रिंटिंग प्रेस,
क्वींस रोड, दिल्ली-६

राष्ट्रीय गांधी जन्म-शताब्दी समिति

श्री रगनाथ रामचद्र दिवाकर की अध्यक्षता मे समिति की प्रकाशन सलाहकार समिति के तत्त्वावधान मे 'गाधी स्मारक निधि' के द्वारा 'सस्ता साहित्य मडल' के सहयोग से यह पुस्तकमाला प्रकाशित कराई जा रही है।

१, राजघाट कालोनी,
नई दिल्ली

—देवेन्द्रकुमार गुप्त
संगठन मंत्री
राष्ट्रीय गाधी जन्म शताब्दी
समिति

प्रकाशकीय

महात्मा गाधी के जीवन के लोकोपयोगी प्रसगो की इस पुस्तक-माला की पाचवी पुस्तके पाठको के हाथो मे पहुच चुकी है। छठवी पहुच रही है। इन तथा आगे की अन्य पुस्तको मे गाधीजी के व्यक्तित्व एव कृतित्व पर प्रकाश डालनेवाले प्रसग दिये गए है।

इन पुस्तको की सामग्री अनेक पुस्तको मे से चुनकर ली गई। उन पुस्तको तथा उनके लेखको के नाम प्रत्येक पुस्तक के अन्त मे दे दिये गए हैं। इन प्रसगो की भाषा को अधिकाधिक परिमार्जित कर दिया गया है। यह कार्य श्री विष्णु प्रभाकर ने किया है। वह हिन्दी के जाने-माने कथाकार तथा नाटककार है। उन्होने हिन्दी की अनेक विधाओ को समृद्ध किया है। इन पुस्तको की भाषा को अपनी कुशल लेखनी से उन्होने न केवल सरस बनाया है, अपितु उसे सुगठित भी कर दिया है। इसके लिए हम उनके आभारी हैं।

अत्यन्त व्यस्त होते हुए भी श्री दिवाकरजी ने इस पुस्तक-माला की भूमिका लिख देने की कृपा की, तदर्थ हम उनके अनुग्रहीत हैं।

पुस्तक का मूल्य इतना कम रखने के लिए निधि द्वारा आशिक आर्थिक सहायता दी जा रही है।

हमे पूरा विश्वास है कि इन पुस्तको का सभी वर्गो तथा क्षेत्रो मे हार्दिक स्वागत होगा और इनका देश-व्यापी ही नही, विश्व-व्यापी प्रचार भी।

—मत्री

भूमिका

जो बात उपदेशो के बडे-बडे पोथे नही समभा सकते, वह उन उपदेशो मे से किसी एक को भी जीवन मे उतारने के समभ मे आ जाती है। इसलिए गाधीजी कहते थे कि मेरा जीवन ही मेरा सन्देश है। उनके जीवन का यह सन्देश उनके दैनन्दिन जीवन की घटनाओ मे प्रदर्शित और प्रकाशित होता है।

ससार के तिमिर का नाश करने के लिए मानव-इतिहास मे जो व्यक्ति प्रकाश-पुज की भाति आते है उनका सारा जीवन ही सत्य और ज्ञान से प्रकाशित रहता है। गाधीजी के जीवन मे यह बात साफ दिखाई देती है। इस पुस्तक-माला मे गाधीजी के जीवन के चुने हुए प्रसगो का सकलन करने का प्रयास किया गया है। उनका प्रकाश काल के साथ मन्द नही पडता। वे क्षण मे चिरन्तन के जीवन के किसी पहलू को प्रदर्शित करते है। उनकी प्रेरणा स्थानीय न होकर विश्वव्यापी है।

ये प्रसग गाधीजी के जीवन से सम्बन्धित प्राय सभी पुस्तको के अध्ययन के बाद तैयार किये गए है। हर प्रसग की प्रामाणिकता की पूरी तरह रक्षा की गई है। फिर भी वे अपने आपमे सम्पूर्ण और मौलिक है।

यह पुस्तक-माला अधिक-से-अधिक हाथो मे पहुचे तथा भारत की सभी भापाओ मे ही नही, वरन् ससार की अन्य भाषाओ मे भी इसका अनुवाद हो, ऐसी अपेक्षा है। मैं आशा करता हू कि गाधी-जन्म-शताब्दी के अवसर पर प्रकाशित यह पुस्तक-माला अपनी प्रभा से अनगिनत लोगो के जीवन को प्रेरित और प्रकाशित करेगी।

रंगनाथ दिवाकर

विषय-सूची

मैं महात्मा नहीं हूं

०

मैं महात्मा नहीं हूं

गाधीजी बगलौर मे ठहरे हुए थे। एक दिन एक स्त्री थाली मे नारियल, केले, पान, सुपारी और फूल आदि लेकर आई। वह सब सामग्री उसने गाधीजी के पैरो के पास रख दी और चरण छूकर सामने खडी हो गई। गांधीजी ने उत्तर मे हाथ जोडे। वह बहन उसी तरह खडी रही। गाधीजी ने दूसरी बार हाथ जोड़े, तीसरी बार हाथ जोडे, लेकिन वह बहन वहा से नही हटी। उस समय चक्रवर्ती राजगोपालाचारी गाधीजी के साथ थे। गाधीजी ने उनसे कहा, "क्या इन्हे कुछ कहना है? जरा पूछिए तो।"

कन्नड़ मे उस बहन से बातचीत करने के बाद राजाजी ने कहा, "इन्हे पुत्र की आवश्यकता है। आप महात्मा है। यह आपसे पुत्र-प्राप्ति के लिए आशीर्वाद चाहती है।"

गाधीजी बोले, "मै महात्मा नही हू। मै आशीर्वाद कैसे दू?"

राजाजी ने कहा, "यह बहन कहती है कि आपने बहुतो को आशीर्वाद दिये है और वे फले भी है, तब मुझे क्यो नही देते?"

गाधीजी ने कहा, "मुझे अभी ही इस बात का पता चला है

कि मुझमे ऐसी कोई शक्ति है। लेकिन इससे कहिए, गाव मे इतने बालक है, उनमे से किसी एक को गोद लेकर उसका लालन-पालन क्यो नही करती ?"

राजाजी के द्वारा बहन ने उत्तर दिया, "वैसे तो मै रिश्ते-दारो के और पडोसियो के सभी बालको को प्यार करती हू, लेकिन अपना तो आखिर अपना ही है न ?"

इसपर गाधीजी ने उसे 'मेरे-तेरे' और 'अपने-पराये' पर एक अच्छा प्रवचन दिया, परन्तु वह बहन तो टस-से-मस होने-वाली नही थी। हुई भी नही। आखिर गाधीजी बोले, "अगर भगवान तुझको बेटा देना चाहे तो क्या मै इकार कर सकता हू ?"

यह सुनकर उन बहन को लगा कि जैसे आशीर्वाद मिल गया है। प्रणाम करके वह वहा से चली गई।

२ ·

मुआवजे की आशा नहीं रखनी चाहिए

'यग इण्डिया' को अपने अधिकार मे लेने से पहले गाधीजी एक दिन उसके पृष्ठ पलट रहे थे। उसके वास्तविक सपादक श्री आर० के० प्रभू उनके पास ही बैठे थे। गाधीजी ने पूछा, "आपने ये खबरे कहा से ली है ?"

श्री प्रभू ने उत्तर दिया, " 'यग इण्डिया' और 'बाम्बे क्रानिकल' के बदले मे जो भिन्न-भिन्न भारतीय पत्र आते है,

उनके ताजे अंको से काटकर ली गई है।"

गांधीजी ने पूछा, "इस काम मे आप कितना समय खर्च करते है?"

श्री प्रभू ने उत्तर दिया, "इस पृष्ठ के लिए जितनी खबर चाहिए, उन्हे तैयार करने में आधा घंटे से ज्यादा शायद ही लगता है।"

गाधीजी को बडा आश्चर्य हुआ। बोले, "जब मै दक्षिण अफ्रीका मे 'इण्डियन ओपीनियन' का सपादन करता था, तो परिवर्तन में कोई दो सौ पत्र मिलते थे। मै उनको सावधानी से पढ लेता था और प्रत्येक समाचार को तभी लेता था जब मुझे सतोष हो जाता कि इससे सचमुच पाठको की सेवा होगी। जब कोई सपादन की जिम्मेदारी लेता है, तो उसे अपना दायित्व पूरी कर्त्तव्यभावना से निभाना चाहिए। इसी पद्धति से सब प्रकार का धन्धा चलाना चाहिए। क्या आप मुझसे सहमत नही है?"

आर० के० प्रभू ने लज्जित होकर कहा, "जीहां, पर 'क्रॉनिकल' के सम्पादकीय विभाग के एक कार्यकर्ता के नाते मुझे सप्ताह-भर बहुत काम रहता था, इसलिए 'यग इण्डिया' के लिए मुझे जल्दी-जल्दी में काम करना पडता था।"

गाधीजी ने एकदम पूछा, "और इस सबका आपको पुरस्कार क्या दिया जाता है?"

श्री प्रभू ने उत्तर दिया, "प्रत्येक कालम दस रुपये के हिसाब से मिलता है।"

एक कालम मुश्किल से दस इंच लम्बा होता था और वह भी दस पाइंट के टाइप मे, इस प्रकार उन्हे सौ डेढ सौ रुपये मिल

जाते थे। गाधीजी मानो जिरह कर रहे थे, फिर पूछा, "क्रानिकल' के कार्यकर्ता की हैसियत से आपको क्या मिलता है ?"

श्री प्रभू ने उत्तर दिया, "चार सौ रुपये मासिक।"

गाधीजी एक क्षण रुके। फिर बोले, "क्या आपके ख्याल से 'यग इण्डिया' से जो रकम आप ले रहे है, उसका लेना उचित है? आप जानते है कि यह पत्र कोई कमाई का पत्र नही। यह देश-भक्ति का काम है और मेरे खयाल मे स्वावलम्बी भी नही है। क्या उसके सचालको का भार वढाना आपके लिए ठीक है ?"

श्री प्रभू ने उत्तर दिया, "पत्र-सचालक मुझे जो कुछ देते हैं, उसके लिए मैंने उन्हे मजबूर नही किया है। यह सब वह स्वेच्छा-पूर्वक करते है।"

गाधीजी बोले, "फिर भी यदि मैं आपकी जगह होता, तो 'यग इण्डिया' से एक पाई भी न लेता। आपको अपने पूरे समय के काम के लिए 'क्रानिकल' कार्यालय से अच्छा वेतन मिलता है। 'यग इण्डिया' के लिए आप जो कुछ करते हैं, अपने फुर्सत के समय मे करते है। किसीको अपने पूरे समय के लिए पूरा वेतन मिल जाता हो, तो उसे उसी समय मे अन्यत्र किये गए काम के लिए किसी मुआवजे की आशा नही रखनी चाहिए। आप ऐसा नही मानते ?"

नैतिकता का जो नया पाठ गाधीजी श्री प्रभू के हृदय पर अकित करना चाहते थे, उससे वह जरा चौंधिया गये और उनके प्रश्न के उत्तर मे नम्रतापूर्वक सिर हिलाकर अपनी सहमति मात्र प्रकट कर सके।

मेरा बिस्तरा इसीपर करना

यरवदा-जेल मे रात को जब भी बारिश आती तब खाट उठाकर बरामदे मे लाना भारी पडता था। इसलिए गांधीजी ने मेजर से हल्की खाट मांगी।

उसने कहा, "नारियल की रस्सी की चारपाई है। क्या उससे काम चलेगा? आप कहे तो नारियल की रस्सी निकालकर उसे निवाड़ से बुन दिया जाय।"

शाम को खाट आई। गाधीजी बोले, "यह ठीक है। इस पर निवाड़ चढाने की कोई जरूरत नही। मेरा बिस्तरा आज इसीपर करना।"

वल्लभभाई ने कहा, "क्या कहा? इसपर भी सोते हैं? गद्दे मे नारियल के बाल क्या कम है, जो नारियल की रस्सी पर सोना है! बस चारो कोनो पर नारियल बांधना बाकी है। ऐसी बदशगुन खाट से काम न चलेगा। इसमें कल निवाड़ भरवा दूगा।"

गाधीजी बोले, "नही, वल्लभभाई, निवाड़ मे धूल भर जाती है। वह धुलती नही। इसपर पानी उडेला तो साफ।"

वल्लभभाई ने उत्तर दिया, "निवाड़ धोबी को दी तो दूसरे दिन धुलकर आई।"

गाधीजी बोले, "मगर यह रस्सी निकालनी नही पडती, यही धुल जाती है।"

महादेवभाई ने भी गाधीजी का समर्थन किया। कहा, "यह तो गर्म पानी से धोई जा सकती है और इसमे खटमल भी नही रहते।"

वल्लभभाई बोले, "चलो, अब तुमने भी राय दे दी। इस खाट मे तो पिस्सू-खटमल इतने होते है कि पूछो मत।"

गाधीजी ने कहा, "मै तो इसीपर सोऊगा। मुझे याद है, बचपन मे हमारे यहा ऐसी ही खाटे काम मे आती थी। जब अदरक का अचार डालना होता तो अदरक को चाकू से साफ न करके मेरी मा इस खाट पर घिस लेती थी। इससे सब छिलके साफ हो जाते थे।"

वल्लभभाई बोले, "इसी तरह इन मुट्ठीभर हड्डियों पर से चमडी उधड जायगी। इसीलिए कहता हू कि निवाड लगवा लीजिये।"

गाधीजी ने उत्तर दिया, "निवाड तो 'बूढी घोडी लाल लगाम' जैसी हो जायगी। इस खाट पर निवाड शोभा नही देगी। इस-पर तो नारियल की रस्सी ही अच्छी लगेगी। पानी डालते ही वह बिल्कुल धुल जायगी, जैसे कपडे धुल जाते है और वह कभी सडेगी नही। यह कितना आराम है!"

वल्लभभाई ने कहा, "खैर, मेरा कहना न माने तो आपकी मर्जी।"

और गाधीजी ने उसी खाट का प्रयोग किया।

तुम्हें शादी करने की बड़ी जरूरत है

यरवदा-जेल मे गांधीजी के पास विदेशो से बहुत पत्र आते थे। मार्गरेट नाम की एक स्त्री बडे प्रेम-भरे पत्र लिखती रहती थी। एक दिन वह गाधीजी से मिलने के लिए जेल भी आई। महादेवभाई ने उसे देखा। उन्हे वह वडी मूर्ख मालूम हुई। उन्होनें गांधीजी से कहा, "इसे कैसे आने दिया जा सकता है ? हम नही जानते, यह क्यो आई ? नौकरी की तलाश मे या किसी दूसरे काम से ? ऐसा लगता है, जैसे यह एक निर्वासित के तौर पर चली आई है।"

गाधीजी ने कहा, "उसे जरूर बुलवाया जाय। उससे हरिजनो का काम लेना है। वह इसी काम के लिए आई है या नही, वह योग्य है या नही, उससे मिले बिना इन बातो का निश्चय कैसे किया जा सकता है ?"

वह आई और गाधीजी के पैर पकडकर कहने लगी, "मैं झूठ बोलकर आई हू। यहां आने का कारण भी गलत बताया है। रहने की मियाद भी झूठी दी है। मेरे पासपोर्ट की मियाद ८ जुलाई को समाप्त होती है। बापूजी, मैं व्रत लू तो मुझे आश्रम मे भेज देगे। मेरे लिए तो आप ईश्वर है। मुझे हिन्दुस्तानी बना लीजिये। किसीकी दत्तक पुत्री बना दीजिये, नही तो मुझे किसी ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञावाले के साथ व्याह दीजिये।"

सुनकर गाधीजी खिलखिला उठे, लेकिन तीसरे ही दिन

उसकी जड़ता स्पष्ट हो गई । गांधीजी मजाक करते हैं, इसलिए वह ईश्वर कैसे हो सकते है ? उन्होने उसे पुरुप जैसी पोगाक पहने की सलाह दी, यह तो असभ्यता है। एक और विदेशी युवती नीला नागिनी वहा थी । उसका बच्चा महादेव देसाई के कधे पर चढकर खेल रहा था । यह देखकर मार्गरेट चिढ गई । वह उठी और वाह से पकडकर उस वच्चे को जमीन पर पटक दिया । यह देखकर गाधीजी ने कहा, "तुम्हे शर्म नही आती। इस तरह बच्चे को पटकते है ! यह लडका है या पत्थर ?"

निर्लज्ज होकर वह बोली, "अपनें कुत्ते के साथ भी मैं इसी तरह करती थी। उसे कुछ नही होता था ।"

गाधीजी ने कहा, "बच्चो और कुत्तो मे कोई फर्क नही ?"

मार्गरेट वोली, "अपने कुत्ते को मै बच्चा ही मानती थी ।"

इसपर गाधीजी ने कहा, "मेरे खयाल से तुम्हे शादी करने की वडी जरूरत है और वह भी उचित ढग से शादी करने की । ब्रह्मचारी से नही, वल्कि वच्चे पैदा करनेवाले से, तभी तुम्हे पता चलेगा कि वच्चा क्या चीज है ।"

वह वडी निष्ठुर वृत्तिवाली स्त्री थी, लेकिन गाधीजी ने उसे दुत्कारा नही । उन्होने उसको राजनैतिक मामलो मे या सविनय भग मे भाग भी नही लेने दिया । वस, हरिजन-सेवा की ही तालीम पाती रहे, ऐसा प्रवन्ध कर दिया ।

मौत से नहीं लड़ा जा सकता

सन् १९३३ मे जब सरकार ने यरवदा-जेल मे रहते हुए गांधीजी को हरिजन-कार्य करने के लिए उनकी इच्छानुसार सहूलियते नही दी तो उन्होंने एक बार फिर उपवास आरम्भ कर दिया। अभी २९ मई को २१ दिन के उपवास पूरे हुए थे कि १६ अगस्त को यह नया उपवास शुरू हो गया। इन तीन महीनों में स्वास्थ्य पूरी तरह ठीक कैसे हो सकता था, इसलिए यह स्वाभाविक था कि इस बार शरीर को बहुत कष्ट हो। दो-तीन दिन तो सचमुच ही वेदना बहुत विषम थी। गाधीजी ने स्वयं एक पत्र में इसका वर्णन किया था, "मै तो आशा छोड बैठा था। २३ तारीख (अगस्त) की रात को जब कै हुई तो मुझे ख्याल हुआ कि अब ज्यादा नही टिक सकता। मौत से नही लडा जा सकता। २४ तारीख की दोपहर को तो अपने पास की चीजों का दान भी कर दिया।"

यह सब करने के बाद उन्होने कहा, "अब कोई मुझसे न बोले और मुझे पानी भी न दे।"

श्रीमती कस्तूरबा गाधी पास में थी। उन्हे भी जाने के लिए कह दिया। स्वय आखे बन्द करके राम-नाम लेने लगे। बेचारी बा स्तब्ध होकर खडी रही।

दीनबन्धु एन्ड्रूज तीन दिन से बम्बई के गवर्नर को समझा रहे थे कि वह गाधीजी को छोड दे। अन्ततः वह अपने प्रयत्नो मे

सफल हुए और ठीक इसी समय वह गाधीजी को छोडने का हुक्म लेकर तेजी से अस्पताल आये। वहा से गाधीजी और बा को अपने साथ लेकर पर्णकुटी चले गये।

धीरे-धीरे गाधीजी की तबीयत सुधरने लगी। उन्होने घोषणा की कि अगर्चे सरकार ने उन्हे छोड दिया है, फिर भी वह एक साल की मियाद पूरी होने तक सीधे तौर पर सविनय भग की लडाई मे भाग नही लेगे। सारा समय मुख्यत हरिजन-कार्य मे ही बितायगे।

इसके बाद वह ऐतिहासिक हरिजन-यात्रा पर निकल पडे।

: ६ :

सत्याग्रह में मनुष्य को स्वयं कष्ट सहना चाहिए

१९१८ के आरभ मे अहमदाबाद मे प्लेग शान्त हो गया। तब मिल-मालिको ने सोचा कि मजदूरो का प्लेग-बोनस बन्द कर दिया जाय। यह समाचार पाकर बुनाई-विभाग के मजदूरो मे खलबली मच गई। युद्ध के कारण महगाई बढ गई थी, परन्तु वेतन का पचहत्तर प्रतिशत जितना प्लेग बोनस मिलने से उनके रहन-सहन का स्तर गिरा नही था। बोनस बन्द हो जाने पर स्थिति फिर बिगड जायगी। इसलिए उन्होने मालिको के सामने ऐसी माग रखने का निश्चय किया, जिससे बोनस के बदले वेतन मे ही व्यवस्थित वृद्धि करदी जाय।

अनुसूयाबहन इससे पहले तानेवाले मजदूरो की हडताल का सचालन कर चुकी थी, इसलिए बुनाई-विभाग के मजदूर भी उनकी शरण मे गये। अनुसूयाबहन को ऐसा लगा कि इसके लिए गाधीजी का मार्ग-दर्शन बहुत आवश्यक है। सौभाग्य से गाधीजी तबतक बिहार से लौट आये थे। उनसे चर्चा हुई और अन्त मे उन्होने पैतीस प्रतिशत वृद्धि की माग करने का निर्णय किया।

मिल-मालिको ने मजदूरो की यह न्याय-पूर्ण माग स्वीकार नही की। तब उन लोगो ने हड़ताल करदी। उसके उत्तर में मिल-मालिको ने मिलो मे तालाबन्दी घोषित करदी। सघर्ष अब तीव्र हो उठा, लेकिन गाधीजी के आदेशानुसार वह शान्त बना रहा।

हडताल चलते हुए अभी थोडे ही दिन हुए थे कि इसकी खबर अहमदाबाद शहर के बाहर भी सब जगह फैल गई। यह लडाई लम्बे समय तक चलेगी, तो मजदूरों को आर्थिक कठिनाई का सामना करना पडेगा, यह सोचकर इस लडाई के प्रति जिनकी सहानुभूति थी, उन्होने सुझाया कि मजदूरो की मदद के लिए गाधीजी एक फण्ड स्थापित करे।

इस सम्बन्ध मे बम्बई के एक मित्र ने इस राहत कोष मे एक बडी रकम भेजने की इच्छा प्रकट की। लेकिन जब यह प्रश्न गाधीजी के सामने आया, तो उन्होने स्पष्ट कहा, "ऐसी माग कभी स्वीकार नही की जा सकती। अहमदाबाद के कुछ मित्र भी ऐसी सहायता करना चाहते थे। यह सच है कि मजदूरो को पैसे की जरूरत पडेगी। लेकिन मजदूरों की लडाई आम जनता के पैसे से नही लडी जा सकती। मजदूर गरीब भले ही हो, परन्तु उनमे भी

स्वाभिमान होता है। हमे देखना चाहिए कि उनका यह स्वाभिमान बना रहे। उनमे स्वाभिमान की भावना होगी, तो वे दु ख सहन करके भी लडेगे। सत्याग्रह मे मनुष्य को स्वय कष्ट सहना चाहिए।"

उन्होने यह भी कहा कि बाहर से मदद मिलने पर मिल-मालिको का रुख और भी कडा हो जायगा। इसलिए किसी भी मदद की आशा रखे बिना केवल अपनी शक्ति से या दूसरा कोई काम करके मजदूर यह लड़ाई लडे, तो मालिक समझ जायगे कि ये लोग टिके रहेगे, तब उन्हे समझौते का विचार करना पडेगा। उन्होने मजदूरो को मदद पहुचाने का कोई और तरीका ढूढने के लिए कहा। बोले, "जरूरत पडने पर हम मजदूरो की मदद कर सकते है, परन्तु इस तरह के उनके निर्वाह के लिए हम दूसरे किसी अनुकूल काम की व्यवस्था कर दे तब लडाई काफी दिनो तक चलाई जा सकेगी और उसके टूटने का कोई भय नही रहेगा।"

और अन्त मे ऐसा ही किया भी गया।

: ७ :

आटा पीसना बहुत अच्छा है

गाधीजी की एक बहन थी। जब वह दक्षिण अफ्रीका मे थे तो उनके पास जो कुछ था वह उन्होने आश्रम को दे दिया था। भारत लौटे तो यहा भी उन्होने अपनी सम्पत्ति पर से अधिकार छोड़ दिया था। सबकुछ देकर वह अकिचन बन गये थे।

लेकिन अब उनकी बहन का क्या हो ? वह विधवा थी। गाधीजी अपने निजी खर्च के लिए किसीसे पैसा नही लेते थे। लेकिन बहन का तो कुछ प्रबन्ध होना ही चाहिए। उन्होने अपने पुराने मित्र डाक्टर प्राणजीवन दास मेहता से कहा कि वह गोकीबहन को दस रुपये महीना भेज दिया करे।

मेहतासाहब रुपये भेजने लगे, लेकिन कुछ दिन बाद गोकी-बहन की लडकी भी विधवा हो गई और मां के पास आकर रहने लगी। दस रुपये मासिक मे दोनों का गुजारा होना असम्भव था। बहन ने गाधीजी को लिखा, "अब खर्च बढ गया है और उसे पूरा करने के लिए हमें पडोसियो का अनाज पीसने का काम करना पडता है।"

गाधीजी ने उत्तर मे लिखा, "आटा पीसना बहुत अच्छा है। दोनो का स्वास्थ्य अच्छा रहेगा। हम भी आश्रम मे आटा पीसते है। और जब जी चाहे, तुम दोनो को आश्रम में आकर रहने और बने सो जन-सेवा करने का पूरा अधिकार है। जैसे हम रहते है वैसे ही तुम भी रह सकती हो। मै घर पर कुछ नही भेज सकता। न मित्रो से ही कुछ कह सकता हू।"

जो बहन आटा पीसने की मजदूरी कर सकती थी, उसे आश्रम का जीवन कुछ कठिन नही मालूम होना चाहिए था। लेकिन आश्रम मे तो हरिजन भी रहते थे न। उनके साथ रहना-सहना, खाना-पीना यह सब पुराने ढंग के लोग कैसे कर सकते थे ? बहन नही आई। गांधीजी ने भी उनके लिए पैसो का प्रबन्ध नही किया।

मैं तो पैसे का लालची ठहरा

दिल्ली-प्रवास मे एक बार गाधीजी का जन्म-दिन आया। नगर के कुछ गुजरातियो ने निर्वासितो के लिए कुछ धन इकट्ठा किया और गाधीजी से तीन बजे अपनी सभा मे आने का वचन ले लिया। उन दिनो उन्हे खासी बहुत अधिक आती थी। सरदार वल्लभभाई पटेल को जब इस बात का पता चला, तो उन्होने गाधीजी से कहा, "आपको इतनी सख्त खासी आती है तब फिर आप किसलिए गुजरातियो की सभा मे जा रहे है ? लेकिन आप तो इतने लालची है कि अगर आपको पता चले कि अमुक जगह से पैसे मिलनेवाले है तो आप मृत्यु-शैया पर से भी उठकर चले जायगे। पैसा क्या इस तरह इकट्ठा किया जाता है ? खो-खो करते हुए सभा मे जाने की क्या जरूरत है ? आप मेरी बात मानेगे थोडे ही!"

इतना कहकर सरदार पटेल हँस पडे। गाधीजी भी हँस पडे और वह सचमुच ही उस दिन तीन बजे गुजरातियो की सभा मे गये। वहा भाषण देते हुए उन्होने कहा, "जब नन्दलालभाई ने कहा कि गुजराती लोग मुझसे मिलना चाहते है और वे कुछ पैसा भी देगे तो मैं पैसे का लालची झट फिसल पडा। पर मैने यह नही सोचा था कि मुझे भाषण भी देना पडेगा।

"दक्षिण अफ्रीका मे मुझे मेरी वर्ष-गाठ की कीमत मालूम नही थी। हिन्दुस्तान मे आकर यह ढोग शुरू हुआ। लेकिन इसके

साथ चर्खा जुड गया है, इसीलिए इसे 'चर्खा द्वादशी' भी कहने लगे हैं। चर्खा अहिसा का प्रतीक है। लेकिन आज अहिसा का दर्शन कठिन हो गया है। अब चर्खा द्वादशी किसलिए मनाई जाय ? लेकिन मनुष्य का स्वभाव है कि वह हाथ-पाव तो मारता ही है, भले ही उसका कोई फल आये या न आये।

"मै इतनी आशा तो रखता हू कि गुजराती जहा भी होगे वहा अहिसा का काम जरूर करेगे। लेकिन वे चर्खा चलायेगे या नही, इसमे मुझे वडी शका है। चर्खे की खूबियो के वारे मे कहा तक कहू। यहा दिल्ली मे और दूसरी जगह जहा-जहा भी गुजराती है वहा-वहा वे चर्खे की रक्षा करे तो भी काफी है। आज धर्म के नाम पर लूट-पाट, खून-खच्चर मचा हुआ है। अपनी स्वतत्रता का हम आज कैसा उपयोग कर रहे है, प्रजा मे कैसी स्वच्छन्दता और कैसी मनमानी आ गई, मेरी दृष्टि मे यह सब वडे दु ख की वात है।"

इसके वाद उन्होने हिन्दी-हिन्दुस्तानी की चर्चा की। कहा, "आप हिन्दुस्तानी भापा और नागरी उर्दू, दोनो लिपि सीख ले। पैसो के लिए मैं आपको धन्यवाद देता हू। उपकार मानता हू। निराश्रित भाई-वहनो के लिए सर्दी मे कम्वलो की वडी जरूरत है। यह सव काम हमे ही करना होगा, हकूमत नही कर सकती। हम एक-दूसरे की मदद से ही काम चला ले, तो हुकूमत को व्यवस्था करने में आसानी रहेगी।"

विरुद्ध मत रखते हुए भी हम एक-दूसरे को सहन कर सकते हैं

हरिजन-प्रवास के समय घूमते-घूमते गाधीजी अजमेर आ पहुचे। काशी के स्वामी लालनाथ जहा भी गांधीजी जाते थे, उनसे पहले ही वहा पहुच जाते थे। वह गांधीजी के हरिजनोद्धार-कार्य के प्रबल विरोधी थे। उनको लेकर तरह-तरह की अफवाहे उडती रहती थी। सुना गया कि स्वामी लालनाथ ने कुछ व्यक्तियो को इसलिए तैनात किया है कि वे गाधीजी पर पत्थर फेके। अजमेर के कार्यकर्ता चिन्तित हो उठे, लेकिन जब यह सूचना गाधीजी को मिली तो वह सहजभाव से बोले, "स्वामी लालनाथ के द्वारा ऐसा काम नही हो सकता। वह मुझसे कई बार मिले है। मैं इस खबर पर विश्वास नही कर सकता।"

तभी सूचना मिली कि स्वामी लालनाथ गाधीजी से मिलने के लिए आ रहे है। सयोग की बात उनको गांधीजी के पास ले आने का भार श्री हरिभाऊ उपाध्याय पर आ पड़ा। उन्होंने जब स्वामीजी का चेहरा देखा तो पाया, जैसे वह सहज रूप से उग्र विरोध का सूचक है, लेकिन जैसे ही वह गाधीजी के कमरे मे आये तो मानो सबकुछ परिवर्तित हो गया। उनका व्यवहार बहुत ही सहज और आदर से पूर्ण था। उस क्षण कोई यह विश्वास नहीं कर सकता था कि दो प्रबल विरोधी बातचीत कर रहे हैं। स्वामी लालनाथ ने गांधीजी से कहा, "जब आप काशी

पधारे तो हम लोगो के पास ही ठहरे। हमारे स्वयसेवक आपका सब प्रबन्ध और आपकी रक्षा करेगे।"

उसी सहज भाव से गाधीजी ने उत्तर दिया, "ऐसी योजना मुझे तो प्रिय ही होगी। हम दुनिया को दिखा सकेगे कि विरुद्ध मत रखते हुए भी हम एक-दूसरे को सहन कर सकते है।"

: १० .

केवल सुनी-सुनाई बातें सही मानने के लिए मैं तैयार नहीं

सन् १९२५ मे देशबन्धु चित्तरजनदास की मृत्यु के बाद गाधीजी काफी दिनो तक बगाल मे रहे। वहा के राजनैतिक जीवन मे जो नई-नई समस्याए पैदा हो गई थी, उनके निराकरण मे वह लगे हुए थे। इन्ही दिनो एक बार सहज भाव से उन्होने श्री नलिनीरजन सरकार से कहा, "सवेरे साधारणतया आप किस वक्त जाग जाते है?"

श्री सरकार को यह प्रश्न बडा असगत-सा लगा। शायद गांधीजी ने ऐसे ही पूछ लिया था। उत्तर दिया, "जल्दी ही सोकर उठने की मेरी आदत है।"

गाधीजी बोले, "तो फिर कल भरसक जल्दी उठकर मेरे साथ चले चलना। मुझे आपसे कुछ कहना है।"

सरकार महोदय कुछ भी नही जानते थे। इसलिए वह असमजस मे पड़ गये। यह बात सवेरे के समय हुई थी। अचानक

उसी सध्या को फिर दोनो की भेट हो गई। गाधीजी ने श्री सरकार से कहा, "जिस बात की चर्चा मै आपके साथ करना चाहता था उसका निपटारा हो गया है। इसलिए अब आपको आने की जरूरत नही है।"

और अब उन्होने उस बात की चर्चा भी की। बगाल के एक ख्यातनामा व्यक्ति ने, जिन्हे उसी समय वायसराय की कार्यकारिणी का सदस्य नामजद किया गया था, अपने कई दोस्तो के कहने-सुनने पर श्री सरकार के विरुद्ध गभीर आरोप लगाये थे। गाधीजी ने उनसे कहा था, "मै केवल सुनी-सुनाई बाते सही मानने के लिए तैयार नही हू। मुझे सबल प्रमाण चाहिए।"

प्रमाण प्राप्त होने पर जवाबतलब करने के निमित्त ही गाधीजी ने श्री सरकार को मिलने के लिए बुलाया था। किन्तु उससे पहले ये महाशय फिर गाधीजी से मिले और बोले, "चूकि मेरे मित्र आरोप सिद्ध करने मे असमर्थ है, इसलिए एक सभ्य पुरुष के नाते मैं क्षमा-प्रार्थी हू। मैं श्री सरकार से भी क्षमा मागना चाहूगा।"

गाधीजी ने उत्तर दिया, "इस निमित्त मै उन्हे ही आपके घर ले आनेवाला हू।"

यह सुनकर श्री सरकार का मन भर आया। उन्होने कहा, "ऐसी निन्दा का अब मै अभ्यस्त हो गया हू। इसके अलावा मै कोई इतना बडा आदमी भी नही हू कि वह महाशय मुझसे क्षमा-याचना करे।"

गाधीजी फिर भी अपने साथ उनके घर चलने के लिए श्री सरकार से आग्रह करते रहे। श्री सरकार ने उत्तर दिया,

"मै स्वय ही उनसे मिल लूगा।"

और वह मिल भी लिये।

: ११ :

अच्छा, ले जाओ, तुम्हारी लड़की है

एक लडकी थी। उसके पिता उसकी इच्छा के विरुद्ध उसका विवाह करना चाहते थे। लडकी गाधीजी के आश्रम में आती रहती थी। जब हर प्रकार से प्रयत्न करने के बाद भी वह पिता को न मना सकी, तो उसने अपनी समस्या गाधीजी के सामने रखी। पूछा, "क्या करू?"

गाधीजी ने कहा, "मेरे पास चली आओ।"

लडकी भागकर वर्धा चली आई। उसके माता-पिता को जब यह समाचार मिला तो वे बहुत क्रुद्ध हुए। तुरन्त वर्धा आये। गाधीजी ने आदेश दिया कि उनकी ओर विशेप ध्यान दिया जाय। उन्हे किसी प्रकार का कष्ट न हो।

जब वे गाधीजी से मिलने के लिए आये तो लड़की को भी वही बुला लिया गया। दम्पति ने कमरे मे प्रवेश करते ही गाधीजी को झुककर प्रणाम किया। गाधीजी मुस्कराए। कुशल समाचार पूछा। फिर लड़की की ओर देखकर बोले, "यह मेरे पास भागकर आ गई है। इसे ले जाना चाहते हो। अच्छा, ले जाओ, तुम्हारी लड़की है।"

न जाने इन शव्दो में क्या था कि पिता हठात् वोल उठे,

"बापूजी, लडकी आपकी है। भले आपके ही पास रहे।"

गाधीजी तुरत वत्सल भाव से बोले, "तो अच्छा। इसकी मर्जी है, यही रहे।"

: १२

जहां संकल्प होता है वहां रास्ता मिल ही जाता है

एक मित्र घर जाने से पहले गाधीजी के साथ कुछ बातें करना चाहते थे। लेकिन सामने आते ही उनका धीरज टूट गया। वह अवाक हो रहे। गाधीजी ने कहा, "बोलो, बोलो, बात करो। महादेव ने मुझसे कहा है कि तुमने बरसो पहले जो व्रत लिये थे, उनके बारे मे तुम्हे बाते करनी है। मै तो यह बात भूल ही गया था कि तुमने व्रत लिये थे, पर खैर, बाते करो।"

मित्र मे कुछ हिम्मत आई। टूटे-फूटे शब्दो मे कहा, "पाच वर्ष पहले मैने कुछ प्रतिज्ञाए ली थी और अब "

गाधीजी बोल उठे, "और वे पाली नही जा सकी। यही न?"

महादेवभाई बोले, "नही, इससे उल्टी बात है।"

गाधीजी ने कहा, "तो ये खुशी के आसू है न?"

पर वह भाई तो मूक ही रहे। उनके चेहरे पर आसुओ की धारा बहने लगी। गाधीजी ने कहा, "मैने जब पिता के सामने पहले-पहल अपना अपराध स्वीकार किया तब मेरी जबान नही

खुली थी। इसलिए जो कुछ मुझे कहना था, मैने कागज पर लिख दिया। तुम भी जो कुछ कहना हो, लिख डालो।"

पर वह भाई तो अवाक् ही बने रहे। एक वार तो उन्होने चले जाना चाहा, फिर थोडे और आसू बह जाने के बाद उनमें हिम्मत आई। वोले, "वापू, पाच वरस पहले मैने अपनी प्रतिज्ञा लिखी थी और आपने उसमें एक शब्द सुधारा था।"

गांधीजी बोले, "पर मै तो उसे बिलकुल भूल गया हू।"

पिछली वाते याद दिलाकर उन मित्र ने कहा, "बापू, मुझे अन्तःकरण से घोर युद्ध करना पडा है, पर ईश्वर की कृपा से मै प्रतिज्ञा के अक्षर का और वहुत-कुछ उसके मर्म का भी पालन कर सका हू।"

गाधीजी ने कहा, "यह तो वहुत अच्छा हुआ। आंसू आते है, यह मै समझ सकता हू। ईश्वर जब प्रतिज्ञा पूरी कराता है तव हृदय आभार की भावना से उमड पडता है।"

मित्र ने कहा, "पर सवाल तो अव है।"

गाधीजी वोले, "कैसे ? तुम्हारी मा अधीरता दिखा रही है! मा तो अधीर होगी ही।"

मित्र ने कहा, "हा, आपने जिस प्रतिज्ञा पर हस्ताक्षर कर दिये, उसे तो वह पूरी तरह मानती है। नही चाहती कि वह भंग हो। पूछती रहती है कि प्रतिज्ञा कव पूरी होगी। मुश्किल मेरी अपनी ही है। एक बार सकल्प कर डालू, तो फिर कोई मुश्किल नही होगी। पर वापू, भीतर का यह सग्राम चलाने का कुछ लाभ भी है ?"

गांधीजी वोले, "हा, जरूर है। क्या सग्राम कुदरत का

नियम नही है, तव आत्मा का तो यह और भी ज्यादा धर्म है। कुदरत मे आध्यात्मिक नियम है और आध्यात्मिक क्षेत्र मे कुदरती नियम है । जीवन स्वय ही एक महासग्राम है । निरन्तर साधना है । अन्तर मे हमेशा तूफान ही रहता है और विकारो से लडते रहना शाश्वत धर्म है। गीता ने तीन जगह ये वाते कही है। तीन से ज्यादा वार भी कही होगी, परन्तु मुझे तीन जगह की कही गई याद है। जहा सकल्प होता है, वहा रास्ता मिल ही जाता है।"

मित्र ने कहा, "बापू, मुझे अशीर्वाद दीजिये।"

गाधीजी बोले, "तो तुम्हे जो कुछ लिखना हो, लिख डालो। ठीक होगा तो मै उसपर दस्तखत कर दूगा।"

मित्र ने नोटवुक निकाली और ४ जुलाईवाली तारीखवाले पन्ने पर लिखा, "तुमने जो वात की है, उसका मर्म याद रखना। मेरा आशीर्वाद है कि तुम्हारी साधना सफल हो।"

गाधीजी ने ये वचन एक वार पढे, दो बार पढे, फिर बोले, "एक शब्द जोड दू ?"

और उन्होने 'साधना' से पहले 'अनिवार्य' शब्द जोड दिया। और फिर कापते हुए हाथ से 'वापू' लिखकर हस्ताक्षर कर दिये। बोले, "हाथ न कापते होते तो कितना अच्छा ! पर कोई वात नही। इस सिलसिले मे गीता के छठे अध्याय का अन्तिम भाग पढना।"

वह मित्र अनुग्रह मानकर और प्रणाम करके चले गये।

वह सांप भी पहले नम्बर का सत्याग्रही निकला

ज्योही गांधीजी को स्वामी आनन्द से यह मालूम हुआ कि उनके आश्रम में साप बहुत अधिक निकलते है, उन्होने 'हाफकिन इस्टीट्यूट' के कर्नल सोखे से इस सबध में पत्र-व्यवहार शुरू कर दिया। उत्तर में कर्नल सोखे ने उन्हे सर्प-विद्या के सबध मे सभी साहित्य भेज दिया। उसे पढकर गाधीजी की जिज्ञासा और भी बढ गई। तभी सेठ जमनालाल बजाज ने उन्हे बतलाया कि वह एक ऐसे साधु को जानते है, जिसे इस विद्या का बहुत अच्छा ज्ञान है। उसके पास अनेक प्रकार के साप है और वह अपना प्रयोगात्मक प्रदर्शन भी दिखा सकता है।

गाधीजी वह प्रदर्शन देखने के लिए तुरन्त तैयार हो गये और इस प्रकार वह सपेरा साधु एक दिन मगनवाडी में आ उपस्थित हुआ। वह अपने साथ केवल एक ही साप लेकर आया था। उस दिन वहा कार्य-कारिणी समिति की बैठक थी। सभी सदस्य उस सपेरे को देखकर अचरज से चकित रह गये। मगर गाधीजी उस साधु से सूक्ष्म-से-सूक्ष्म प्रश्न पूछने लगे। वह काफी चतुर था, लेकिन उसका ज्ञान कर्नल सोखे से अधिक नही था। अग्रेजी की एक प्रामाणिक पुस्तक का मराठी अनुवाद उसके पास था। जो सांप वह अपने साथ लाया था, वह अधिक जहरीला नही था।

लेकिन जिस समय वह सपेरा उस साप को गाधीजी के गले मे लपेटने के लिए आगे बढा तो कार्यकारिणी के सभी सदस्य स्तम्भित और भयभीत हो उठे। गाधीजी ने उसे नही रोका और उसने वह साप उनके गले मे लपेट दिया। कडा जी करके घबराए हुए सब व्यक्तियो ने उस दृश्य को देखा।

उसके बाद उस साधु ने उस साप का फन खोलकर उसके विषैले दात और विष की पोटली दिखलाई। कहा, "अगर कोई खुशी से इस साप से कटवाना चाहता है तो मै उसका जहर फौरन निचोड दूगा।"

गाधीजी की ज्ञान-पिपासा तो कभी शान्त होती नही थी। किसी भी नये प्रयोग के लिए वह हमेशा तैयार रहते थे, विशेषकर जिसके द्वारा वह दीन-दुर्बलो की सेवा अच्छी तरह कर सके। इसलिए वह साप से अपने-आपको डसवाने के लिए तैयार हो गये। परन्तु सभी व्यक्तियो के विरोध करने के कारण साधु महाराज की हिम्मत न पडी। दूसरे दो सज्जन आगे आये, लेकिन तब उस साप ने सत्याग्रह कर दिया और वह किसी भी तरह तैयार नही हुआ।

प्रकृति मनुष्य के अपव्यय के लिए पैदा नहीं करती

एक दिन बिड़लाजी ने गाधीजी से पूछा, "आपकी राय में हर मनुष्य को खाने, पहनने और सुख से रहने के लिए कितने व्यय मे निर्वाह करना चाहिए ?"

गाधीजी ने उत्तर दिया, "जितने मे सुखपूर्वक स्वस्थ रहते हुए निर्वाह कर सके।"

बिडलाजी बोले, "यानी रोटी, दाल, भात, तरकारी, फल, घी, दूध, सूती, ऊनी कपडे और जूते।"

गाधीजी बोले, "जूते की आवश्यकता मै इस देश में नही समझता। शायद खडाऊ की आवश्यकता हो। घी तो ज्यादा नही चाहिए।"

बिडलाजी ने पूछा, "दत-मजन, साबुन, ब्रुश इत्यादि ?"

गांधीजी ने कहा, "अरे, इनकी कही आवश्यकता हो सकती है ?"

बिड़लाजी ने पूछा, "घोडा ?"

सब लोग हँसने लगे। बिडलाजी बोले, "खैर, आपकी राय में गरीब आदमी का बजट कितने रुपये का होना चाहिए ? सौ रुपये माहवार से कम मे कैसे कोई सुखपूर्वक गुजर कर सकता है ? यह मेरे जैसे मनुष्य की बुद्धि से बाहर की बात है।"

श्री हरिभाऊ उपाध्याय वही बैठे हुए थे। बोले, "मैने सोचा-

रण आदमी का बजट बनाकर देखा है। ५० रुपये प्रतिमास काफी है।" (यह बात दिसबर सन् १६२८ की है।)

महात्माजी को पचास रुपये भी अधिक मालूम हुए। उन्होने कहा, "पच्चीस रुपये माहवार काफी है।"

बिडलाजी बोले, "यह तो असम्भव है।"

गाधीजी ने कहा, "अच्छा, जो स्वास्थ्य के लिए चाहिए उतनी सामग्री का तखमीना लगा लो। यदि २५ रुपये से अधिक आता है, तो मुझे क्या उज्र है। किन्तु मै जानता हू कि २५ रुपये माहवार हर मनुष्य को खाने को मिल जाय तो यहा रामराज्य आ जाय।"

बिडलाजी ने पूछा, "और यदि किसीको पचास रुपये से ज्यादा मिल जाय तो?"

गाधीजी ने उत्तर दिया, "ज्यादा मिल जाय तो उसका उपभोग करे, किन्तु वह तो फिजूलखर्ची है। ऐसे मनुष्यो को मै त्याग का ही उपदेश दूगा।"

बिडलाजी ने फिर पूछा, "महात्माजी, यदि प्रत्येक मनुष्य की आय २०० रुपये या इससे भी अधिक प्रतिमास हो जाय, तो आपको क्या उज्र हो सकता है?"

गाधीजी आवेश मे भर उठे। बोले, "उज्र नही हो सकता! उज्र तो हो ही सकता है। ससार मे प्रकृति जितना पैदा करती है, वह तो इतना ही है कि हर मनुष्य को आवश्यक वस्त्र और जीवन-निर्वाह की अन्य आवश्यक सामग्री सुखपूर्वक मिल जाय। प्रकृति मनुष्य के अपव्यय के लिए हरगिज पैदा नही करती। इसके माने तो ये है कि यदि एक मनुष्य आवश्यकता से अधिक

उपभोग करता है, तो दूसरे मनुष्य को भूखा रहना पड़ता है, इसलिए जो अधिक उपभोग करता है, उसे मै लुटेरे की उपमा देता हू। पचास रुपये से अधिक जो अपने लिए खर्च करते है, वे लुटेरे है। इग्लैण्ड एक छोटा-सा देश है। वहा के साढे तीन करोड आदमियो के भोग-विलास के लिए सारा एशिया उजाडा जा रहा है। यदि भारत के वत्तीस करोड मनुष्य दो सौ रुपये माहवार या अधिक खर्च करेगे तो ससार तबाह हो जायगा। भगवान वह दिन न लाये कि भारत के लोग अग्रेजो की तरह उपभोग करना सीखे। यदि ऐसा हुआ तो ईश्वर ही रक्षा करेगा। साढे तीन करोड की भोग-पिपासा मिटाने के लिए यह देश मरा जा रहा है। वत्तीस करोड आदमियो की भूख मिटाने मे तो ससार को मरना होगा।"

बिडलाजी बोले, "महात्माजी, यदि दो सौ या इससे अधिक खानेवालो को आप लुटेरा समझते है तब तो मारवाडी, गुजराती, पारसी, चेट्टी इत्यादि सब लुटेरे है?"

अत्यन्त गम्भीर स्वर मे गाधीजी ने कहा, "इसमे क्या शक है? वैश्यो के हितार्थ प्रायश्चित्त करने के लिए ही मैने वैश्यपन छोडा है।"

अपने साथियो की भावनाओ का भी तो कुछ ख्याल करेंगे

राष्ट्रभापा प्रचार समिति, वर्धा के अध्यापन मन्दिर मे प्रशिक्षण पाने के लिए भारतवर्प से राष्ट्रभापा के प्रचारक आते थे। स्वाभाविक था कि उनमे गाधीजी के दर्शनो की उत्सुकता रहती। इसलिए जव भी अवसर मिलता, वे अवश्य ही सेवाग्राम हो आते थे।

एक बार जब ये लोग गाधीजी से मिलने गये, तो उन्होने अध्यापन मन्दिर की व्यवस्था के सम्बन्ध मे पूछा। विद्यार्थियो ने वातो-ही-बातो मे असुविधाओ की चर्चा भी की। एक विद्यार्थी ने कहा, "वापूजी, हमारे साथ सीमाप्रान्त के छात्र भी रहते है। वे शौच जाते समय पानी नही ले जाते। मिट्टी के ढेले ले जाते है। हम लोगो को यह बुरा लगता है। उनके साथ रहने और भोजन करने मे घिन आती है। आप इन्हे समझा दीजिये।"

उस दल मे सीमा-प्रान्त के छात्र भी थे। उनमे से एक ने उत्तर दिया, "हम लोगो को पानी ले जाने की आदत नही है। अपने हाथ से मैले को स्पर्श करने मे ही हमे गन्दगी लगती है। अग्रेज लोग भी तो पानी नही ले जाते। उन्हे कोई गन्दा नही कहता। न कोई उनसे घृणा करता है। फिर हमारे साथ ही यह अन्याय क्यो?"

यह सुनकर गाधीजी मुस्कराते हुए बोले, "आपकी वात ठीक

है। पर आप अपने साथियों की भावनाओ का भी तो कुछ ख्याल करेंगे या नही! सरहद प्रदेश मे अत्यधिक जाड़ा पड़ने के कारण आप पानी का प्रयोग नहीं करते। लेकिन यहा तो ऐसी स्थिति नही है। इसके अतिरिक्त सफाई की दृष्टि से पानी का प्रयोग करना अधिक अच्छा होता है। हम लोग अंग्रेजों की हर बात का अनुकरण थोड़े ही कर सकते हैं! वे लोग अच्छी तरह कुल्ला नही करते, इसी कारण उनके दांत बहुत खराब हो जाते है। क्या हम भी उनका अनुकरण करके अपने मजबूत दातों को कमजोर बना ले?"

गांधीजी के इस स्पष्टीकरण से सीमा-प्रान्त के विद्यार्थी समझ गये और वह समस्या आसानी से हल हो गई।

: १६ :

आश्रम के नियमों ने बाप की ममता को जकड़कर रख दिया है

एक दिन सौ० शारदादेवी शर्मा महिलाश्रम से पढाकर घर लौटी तो दो-तीन बहनों को प्रतीक्षा करते पाया। वह मद्रास से आई थी और गांधीजी के दर्शन करके उसी दिन लौट जाना चाहती थी। दर्शन से पहले उन्होने भोजन करना भी स्वीकार नही किया।

शारदादेवी उन्हे अपने साथ लेकर सेवाग्राम की ओर चली। लेकिन बातो-ही-बातो मे न जाने क्या हुआ कि वे रास्ता भूल

गई। इधर-उधर भटककर जब वे आश्रम मे पहुची तो मिलने का समय बीत चुका था। एक बन्धु ने उन्हे सलाह दी, "अभी थोडी देर मे अमतुस्सलाम बहन बापूजी को मठा पिलाने जायगी। जाकर उनकी खुशामद करो, शायद वह तुम्हे ले जाय।"

शारदादेवी वही पहुची। अमतुस्सलाम बहन ने उनकी बात सुनी और हँस पडी। चश्मे के भीतर से उन्हे घूरती हुई बोली, "हरकते तो करती हैं आप लोग, डाट खानी पडती है मुझे! सो भी महादेवभाई की! भला यह भी कोई समय है बापू को परेशान करने का!"

लेकिन अनुनय-विनय करने पर वह उन सबको गांधीजी के पास ले गई। कुटिया का वातावरण गम्भीर था। दरवाजे के ठीक सामने सफेद बिछौना बिछा था। उसके ऊपर एक डेस्क रखी थी। पीछे के खम्भे के सहारे एक लकडी का तख्ता था। गाधीजी उसीपर टिके बैठे थे और एक कार्ड पढ रहे थे। पास ही एक छोटी-सी तिपाई भी रखी थी। अमतुस्सलाम बहन ने उसी तिपाई पर गिलास रखा कि गाधीजी का ध्यान टूटा। सामने देखा तो शारदादेवी खडी थी। बोले, "अभी कैसे?"

शारदाबहन ने अपनी कहानी कह-सुनाई। सुनकर गाधीजी बड़े जोर से हँसे, लेकिन यह जानकर वह असमजस मे पड गये कि ये बहने अभी तक भूखी हैं और इन्हे आश्रम देखकर अभी लौट जाना है। बोले, "तुमने अपने आने की सूचना पहले से क्यो नही दी?"

संकोच के साथ शारदादेवी बोली, "बापू, पिता के घर आने वाली बेटियां क्या कभी सूचना देकर आती है? मा-बाप के घर

का दरवाजा तो उनके लिए सदा ही खुला रहता है।"

गाधीजी बोले, "यह तो आश्रम है। आश्रम के नियमो ने बाप की ममता को जकडकर रख दिया है। जाओ, बा की झोपडी मे, जो मिले खा लो।"

वे सब लोग वहा से उठकर चली गई, लेकिन अभी थोडी दूर ही गई थी कि उन्होने गाधीजी को बा की कुटिया की ओर जाते हुए देखा। दो क्षण बाद एक बहन आई। बोली, "बा रसोई में गई है। आप लोग कितने है?"

यह सुनकर शारदाबहन चकित रह गई। आश्रम मे सब काम समाप्त हो चुके थे। यह समय आराम का था, पर अब क्या हो सकता था! थोडी देर बाद एक बहन उनको भोजनघर के बरामदे मे ले गई। पीतल की साफ चमकती हुई थालियो मे गर्म-गर्म दो-दो मोटी चपातिया, लाल टमाटर के टुकड़े, गाजर और मूली, ये सब उनके सामने रखते हुए बा बोली, "खाओ, साग अभी नहीं बन सकता।"

लेकिन उसकी जरूरत क्या थी? चपातियो पर दो-दो चम्मच शहद पडा था। वे बेचारी लाज से गडी जा रही थी कि देखती क्या है कि दरवाजे के पास गाधीजी खडे है। हँसते हुए कह रहे है, "आज खूब पेटभर खाना। भूख मे कैसा भी भोजन हो, अच्छा लगता है।"

शारदाबहन ने उत्तर दिया, 'बापूजी, आज का भोजन तो जीवन-भर को स्मारक बन गया है।'

बापू बोले, 'हा-हां, जो एक बार यहा भोजन कर जाते है, वे आश्रम के ऋणी हो जाते है और उस ऋण को चुकाते है, आदि-

वहनो की सेवा करके। पर याद रखना, फिर कभी वा को तकलीफ न देना, नही तो वह मुझसे लड़ेगी।"

और यह कहते हुए वह दूसरे कमरे मे गये। वहा से गुड उठा लाये और अपने कापते हुए हाथो से उन चारो को गुड परोसा।

: १७

तुम तो अब बड़े हो गये

'भारत छोडो'-आन्दोलन मे भाग लेने के कारण श्रीपाद जोशी कई वर्ष जेल मे रहे। छूटने के वाद कुछ दिन उन्होने घर के लोगो से मिलने मे विताये और फिर दिसम्बर १९४४ में वापस वर्धा पहुच गये। जिस दिन वहा पहुचे, उसी रात को वह गाधीजी को प्रणाम करने के लिए सेवाग्राम पहुचे। लगभग ढाई वर्ष वाद वह उनसे मिल रहे थे। गाधीजी ने उन्हे देखते ही कहा, "अच्छा! तुम तो अब वडे हो गये।"

श्रीपाद जोशी ने कुछ लजाकर उत्तर दिया, "जी नही। विल्कुल नही। मै तो वैसा ही हू जैसा दो-ढाई साल पहले था।"

गाधीजी कुछ क्षण के लिए जैसे विचार-मग्न हो गये हो, फिर वोले, "क्यो नही। मैने तुम्हारे वारे मे काफी सुना है।"

यह सुनकर श्रीपाद जोशी गम्भीर हो आये। पूछा, "लेकिन यह वताइये कि मै वडा कैसे हुआ!"

गांधीजी ने कहा, "काम से।"

श्रीपाद जोशी वोले, "काम से! मगर मैने जो कुछ किया है वह तो आपको पसन्द नही!"

गाधीजी ने सहज-भाव से उत्तर दिया, "लेकिन ऐसा थोडे ही है कि जो काम मुझे पसन्द न हो, वह बडा ही न हो। इसीमे तो मेरी परीक्षा है कि जो काम मुझे पसन्द नही है, उसके भी वड़प्पन को मै समझ सकू और उसकी कद्र कर सकू।"

श्रीपाद जोशी ने कहा, "अगर हमारे लोगो को यह वात मालूम हो जाय तो वे कितने खुश होगे!"

(श्रीपाद जोशी और उनके साथियो ने 'भारत छोडो' आन्दोलन मे तोड-फोड का काम किया था और यह समझा जाता था कि गाधीजी उस काम को पसन्द नही करते थे।)

: १८ :

आपका अर्थ सही है

१९३२ मे गाधीजी जब यरवदा-जेल मे थे तब कर्नाटक के दो नवयुवको ने एक वार किसी माग को लेकर उपवास करना आरंभ कर दिया। पन्द्रह दिन से उन्हे जवरन दूध पिलाया जा रहा था। उनकी माग थी कि उन्हे ब्राह्मण के हाथ का बना हुआ खाना मिलना चाहिए। गाधीजी और उनके साथी इस माग को मूर्खता-पूर्ण समझते थे। इसलिए कई दिन तक किसीने कुछ नही कहा। लेकिन एक दिन गाधीजी ने सुपरिटेडेट से पूछा 'आप किसीको

इन लोगो से मिलने देगे या नही ? हम इन लोगो को इनकी भूल समझाना चाहते है ।"

सुपरिटेडेट ने उत्तर दिया, "इस तरह तो अनुशासन भग हो जायगा। अगर यो उपवास करे और उन्हे तुरन्त समझाने को आदमी भेजे तो कैसे चले !"

गाधीजी ने कहा, "मै यह नही कहता कि आप उन्हे ब्राह्मण के हाथ की रसोई दीजिये। मै तो यह कहता हू कि उन्हे समझाने के लिए किसीको जाने दीजिये। आपको कर्मचारी की बजाय एक इन्सान की हैसियत से इसे स्वीकार करना चाहिए।"

सुपरिटेडेट ने उत्तर दिया, "अगर मै इस तरह उन्हे दूसरों से मिलने दू तो फिर लोग अपने मित्रो से मिलने के लिए उपवास करेगे। और इन लोगो का क्या उपवास ? मै मानता हू कि ये तो छिपे-छिपे खाते होगे। ऐसा लगता ही नही कि ये उपवास कर रहे हो।"

गाधीजी ने कहा, "तब तो मै कहूगा कि आपने उन्हे अधिक मनुष्यताहीन बना दिया है। क्या आप यह चाहेगे कि ये लोग ऐसा करते रहे ?"

बेचारा सुपरिटेडेट कहातक बहस करता ! उसने गाधीजी को उनसे मिलने की अनुमति दे दी। वह उनसे मिले।

ये दोनो युवक पहली बार ही जेल नही आये थे। इससे पहले वे अब्राह्मण का बनाया हुआ भोजन भी खा चुके थे। एक युवक ने कहा, "मेरे भाई की मृत्यु हो गई है। मैंने उसे वचन दिया था कि मैं अब आचार का पालन करूगा और ब्राह्मण के हाथ का बनाया ही खाऊगा।"

उसका साथी कैदी के अधिकार की रक्षा के लिए ही उसके साथ हो गया था। गाधीजी ने पहले तो उन्हे समझाया, लेकिन जब उन लोगो ने नियम की बात कही तो वह बोले, "अच्छा, मैं तुम्हे मजबूर नही करूगा। मगर शर्त यह होगी कि मुझे विश्वास हो जाय कि ऐसा नियम है। अगर ऐसा नियम न होगा, तो तुम्हे मेरा कहना मानना होगा।"

उन्होने इस शर्त को स्वीकार कर लिया। अब प्रश्न यह था कि जेल के नियम कैसे देखे जाय। डाक्टर ने बताया कि ऐसा सर्कूलर है कि किसी कैदी को नियम दिये ही न जाय।

गाधीजी बोले, "इसके लिए मुझे लडना पडेगा।"

मेजर भडारी भी नियम दिखाने के पक्ष मे नही थे। गाधीजी के बीच मे पडने से वह और भी चिढ गये। उन्होने कहा, "मुझे अधिकार नही है! आई० जी० पी० की मजूरी के बिना कुछ नही किया जा सकता।"

गांधीजी बोले, "तो आप उनसे पूछ लीजिये।"

बहुत देर तक इसी तरह वाद-विवाद होता रहा। अन्त मे सुपरिटेडेट ने कहा, "अच्छा, तो मै कल नियम देखूगा और फिर आपको बताऊगा।"

महादेव देसाई बोले, "अभी ही मगवा लीजिये न, जिससे फौरन फैसला हो जाय।"

गांधीजी ने कहा, "जाइये, आपको वचन दिया कि मुझे जरा भी लगेगा कि आपका अर्थ लग सकता है, तो मै उसे मान लूगा। अगर यह लगा कि दो अर्थो की गुजाइश ही नही और मेरा ही अर्थ सही है तो फिर आप आई० जी० पी० को लिखेगे।"

वह राजी हो गये। पुस्तक मगवाई गई। उसमे लिखा था, किसीकी धार्मिक भावना को दु ख पहुचाने की मनाही है। ब्राह्मण अगर ब्राह्मण की वनाई हुई रसोई का आग्रह करे तो उसे दी जा सकती है। हा, वह केवल तग करने के लिए ही माग नही करे। ब्राह्मण रसोइया कैदी न हो तो उसे स्वय वना लेने की छूट होनी चाहिए। मगर जात-पात की रू से पेश किये जानेवाले अधिकारो के मामले मे सुपरिटेडेट को कोई शका हो, तो उसे आई० जी० पी० से जरूर पुछवाना चाहिए और उनका हुक्म आखिरी माना जायगा।"

गाधीजी ने जब यह पढा तो तुरन्त कहा, "आपका अर्थ सही है।"

गाधीजी की यह न्यायप्रियता देखकर सुपरिटेडेट वहुत प्रसन्न हुआ। उन दोनो युवको को भी वुलवाया गया और वे भी गाधीजी की वात मान गये। उन्होने उपवास छोड दिया।

: १९ :

किसी रात को तुम्हारा हार चुरा ले जाऊगा

जुलाई १९४६ मे गाधीजी पूना के प्राकृतिक चिकित्सालय मे थे। तभी पाच तारीख को श्रीपाद जोशी की पत्नी उनसे मिलने के लिए वहा पहुची। सम्भवत वह बहुत व्यस्त थे, इसलिए वहुत देर तक प्रयत्न करने पर भी वह अन्दर न जा सकी। प्रार्थना

के समय ही उन्हे अवसर मिला। गाधीजी प्रार्थना के लिए उठ रहे थे कि उन्होने उनके चरण छुए। बोली, "मै कब की अन्दर आने के लिए छटपटा रही थी, मगर कोई घुसने ही नही देता था।"

गांधीजी ने इससे पहले केवल एक बार ही उन्हे देखा था। लेकिन वह तुरन्त पहचान गये। बोले, "आखिर आ तो गई। बडी होशियार लडकी हो तुम। इस लगन और होशियारी का प्रयोग तुम्हे अपने सारे जीवन मे करना चाहिए। जितना ज्ञान प्राप्त कर सको, प्राप्त कर लो।"

बाते करते-करते सहसा उनका ध्यान जोशीजी की पत्नी के गले मे पडे हुए स्वर्ण हार की ओर गया। वह हार उनका नही था। शौक के लिए अपनी चचेरी बहन से मागकर पहन लिया था। गांधीजी ने उसे देखा, तो उनके अन्दर का दरिद्रनारायण जाग आया। गम्भीर होकर बोले, "यह क्या! तुमने सोने का हार पहना है? हमारा श्रीपाद तो गरीब है। तुम बडी चालाक लडकी मालूम होती हो। क्या तुम उसे इसी तरह लूटती हो? क्या तुम बहुत धनी हो? मालदार तो चाहे जिस तरीके से बना जा सकता है। चोरी करके भी लोग अमीर बन सकते है।"

और फिर हँसते हुए बोले, "मै बहुत गरीब हू। अब किसी दिन रात को आकर तुम्हारा यह हार चुरा ले जाऊगा।"

उस समय जो व्यक्ति वहा उपस्थित थे वे सब लोग खिल-खिलाकर हँस पडे।

सब मारवाड़ी तुम्हारे जैसे ही उदार-हृदय हों

घटना दिल्ली-प्रवास की है। १९३५ का प्रारम्भ था। एक दिन सवेरे के समय एक व्यक्ति गाधीजी के दर्शन करने के लिए आया। उसके पास एक छोटी-सी टीन की सदूकची, विस्तर का छोटा-सा पुलन्दा, मोटी खादी की मिरजई, खादी की टोपी और खादी की धोती थी। उसने दौडकर गाधीजी के पैर पकड लिये और वही पकडकर रह गया। हटता ही नही था। बडी कठिनता से उसे उठाकर एक तरफ किया जा सका। उसकी आखो से प्रेम के आसुओ की झडी लगी हुई थी और उसे अपनी सुध-बुध नही थी। अपना सामान उसने एक तरफ फेक दिया था और वह मारे आनन्द के रो रहा था।

शात होनें पर उसने अपनी टीन की सदूकची खोलकर गीता की पोथी मे दवा हुआ सौ रुपये का एक नोट निकाला। सन्दूकची मे 'हरिजन सेवक' के अक थे। एक भजनो की पुस्तक थी। एक जोडा खादी के कपडे थे और उसके हाथ का कता कुछ सूत था। प्रेम-विह्वल होकर नोट और सूत गांधीजी को देते हुए उसने कहा, "मेरी मनोकामना आज पूरी हो गई।"

गाधीजी ने पूछा, "तुम क्या करते हो ? मुझे ऐसा याद आता है कि मैंने तुम्हे कही देखा है। अच्छा, आ कहा से रहे हो ?"

उसने उत्तर दिया, "मद्रास से आ रहा हू। काम तो मैं कुछ

नही करता। मैं तो केवल आपका नाम जपा करता हू।"

गाधीजी ने पूछा, "पर अगर तुम कुछ भी काम-धन्धा नही करते, तो फिर यह सौ रुपये का नोट तुम्हारे पास कहा से आया?"

उसने कहा, "महात्माजी, मेरे पास अभी कुछ और भी है।

गाधीजी बोले, "तब लाओ, वह भी मुझे दे दो?"

उसने दूसरा एक और सौ रुपये का नोट निकाला और महादेवभाई को दे दिया। गाधीजी बोले, "पर यह तो बताओ तुम आखिर काम क्या करते हो?"

उसने उत्तर दिया, "मै पैसेवाला आदमी हू, पर अब तो फकीर हू। सब छोड-छाड़ दिया। अपने तीनो लडको मे जायदाद बाट दी है। मै अब निश्चित हो गया हू। सेवा लीजिये, अब मै स्वतन्त्र हू। मुझे अपनी टहल में भगी का काम दे दीजिये। बस, मै और कुछ नही चाहता।"

गाधीजी ने हँसते हुए कहा, "अच्छा, तो तुमने इस तरह अपनी सारी सम्पत्ति अपने तीनो लडको मे बाट दी है और मेरे हिस्से की जायदाद कुछ नही छोडी है!"

वह बोला, "नही, ऐसी बात नही है। सर्वस्व आपका ही है। आपके लिए एक हजार रुपये लाने का मेरा विचार था। मेरे लडके ने मुझे एक हजार रुपये दिये तो, पर मन से नही। इस साल व्यापार में उसे कुछ घाटा हुआ है। इसलिए बड़ी रकम वह खुशी से कैसे देता? मैने उससे कहा, 'मुझे पाचसौ ही चाहिए। बाकी पाचसौ तुम्हे लौटा देता हू। जब मै मगाऊं तब भेज देना।'"

यह कहकर उसने बाकी के सारे नोट निकालकर महादेव-भाई को दे दिये।

गांधीजी बड़े जोर से हँसे और बोले, "पर इस तरह तुम बिना पैसे के वापस कैसे आओगे? कुछ रेल-भाडे के लिए तो अपने पास रख लो।"

वह बोला, "नही, कोई जरूरत नही। मैं तार से रुपये मगा सकता हू। मुझे किसी चीज की आवश्यकता नही। महात्माजी, सबकुछ आपका ही है। आप ही सब ले लीजिये।"

महात्माजी ने पूछा, "अब तुम क्या करना चाहते हो?"

वह बोला, "करना क्या है? केवल आपकी सेवा मे रहना है। अगर सेवा नही लेना चाहते, तो मुझे दो दिन यहां ठहर ही जाने दीजिये। फिर मैं अपने देश राजपूताने चला जाऊगा।"

गांधीजी ने उसे डेरे मे ठहरने की आज्ञा दे दी और महादेव-भाई से कहा, "महादेव, ये सब नोट इन्हे लौटा दो। हम यह सब रुपया कैसे ले सकते हैं? या फिर एक नोट रख लो, बाकी सब लौटा दो।"

लेकिन वह स्वाभिमानी क्यो मानने लगा! बोला, "यह ठीक बात नही, दी हुई चीज को मैं छुऊगा भी नही।"

महात्माजी बोले, "जितना मैं चाहता हू, उतना दे दोगे? अच्छा, मुझे एक करोड़ चाहिए, लाओ दो।"

वह अप्रतिभ नही हुआ। बोला, "हा, मैं दे दूगा, पर मुझे भगवान के पास हुण्डी भेजनी होगी। पर वह सावलिया साह तो नरसी मेहता जैसे भक्तो की ही हुण्डी सकारता है।"

गाधीजी बोले, "बहुत ठीक, क्या ही अच्छा हो कि सब

मारवाडी तुम्हारे जैसे ही उदार हृदय हो! तुमने आज मुझे अपना सर्वस्व दे डाला। वे बडे-बडे लखपति तो मुझे सौ या हजार रुपये का ही तुच्छ दान देते है!"

: २१ :

इन्हें हरिजन बच्चों को दे देना

हरिजन-यात्रा के समय जब गाधीजी बिरला मिल गये, तो वहा के श्रमजीवियो और हरिजन बच्चो ने एक सभा करके गाधीजी को मानपत्र अर्पित किया। वह मानपत्र केले के पत्ते में लपेटकर दिया गया था। यह देखकर गाधीजी बोले, "भाव तो यह अच्छा है, पर अगर फल दे देते, तो मै खा भी लेता न।"

गांधीजी ने यह बात विनोद मे ही कही थी, लेकिन थोडी ही देर मे फलो की एक टोकरी वहा आ गई। सभा समाप्त हो जाने पर गाधीजी ने उन फलो को देखा और बोले, "फल तो बडे मीठे जान पडते है। खा लेने की इच्छा होती है, परन्तु क्या किया जाय। अच्छा, इन्हे हरिजन बच्चो को दे देना। उनके द्वारा मै खा लूगा।"

: २२ :

मैं सरकार के साथ अपना सहयोग छोड़ दूंगा

यरवदा-जेल मे रहते समय गाधीजी ने माग की कि हरिजन-कार्य के सम्बन्ध मे वह जिससे मिलना चाहे, उन्हे मिलने दिया जाना चाहिए और जिस पत्र को वह छापना चाहे, उसे छापने दिया जाय। लेकिन शुरू-शुरू मे सरकार का रुख बहुत अच्छा नही था। २५ अक्तूबर, १९३२ के दिन मेजर भडारी सरकार का उत्तर लेकर आये और सुना गये।

गाधीजी ने लिखा, "अस्पृश्यता के बारे मे जिससे मिलना चाहू, उससे न मिलने दे और लिखे हुए पत्र मे से चाहू वह न छापने दे तो मै सरकार के साथ अपना सहयोग छोड दूगा और जबतक शरीर चलेगा तबतक सी० क्लास का भोजन लूगा।"

यह विवाद कई दिन तक चलता रहा। गाधीजी ने उत्तर आने के लिए एक नवम्बर की तारीख निश्चित करदी थी। उन्हे अभी भी आशा थी कि इस प्रश्न का कोई-न-कोई निपटारा हो जायगा। ३१ अक्तूबर को उन्होने मेजर भडारी को प्रगतिशील असहयोग क्या है, यह समझाते हुए पत्र लिखा। सरकार के कर्तव्य पर प्रकाश डाला कि या तो वह अस्पृश्यता के बारे मे पत्रो और मुलाकात-सम्बन्धी सारा पत्र-व्यवहार छाप दे या मेरी माग और सरकार का इन्कार इन दोनो से जनता को जिस तरह चाहे परिचित करा दे।"

यह पत्र पाकर मेजर भडारी गाधीजी के पास आये। बोले, "आप असहयोग कुछ दिन और मुल्तवी रखे। और थोडी चर्चा करे, तो अच्छा हो।"

गांधीजी बोले, "सरकार के पूछे बिना मै चर्चा किस तरह करू ?"

मेजर ने कहा, "आप 'सी' क्लास की खुराक लीजिये, मगर यहीपर बनवा लीजिये।"

गाधीजी हँसे। इस भाव से सिर हिलाया कि तब तो जो खुराक लेता हू, वही न लू ?"

इसपर मेजर ने कहा, "आपका वजन नही बढ रहा है। ऐसा करने से शरीर की शक्ति जाती रहेगी। पेचिश भी हो सकती है।"

उत्तर मे गाधीजी ने लिखा, "मै नही चाहता कि मुझे पेचिश हो, लेकिन होगी तो भोग लूगा। हा, इसके कुछ भी चिन्ह दिखाई देगे तो मै खुराक लेना बिल्कुल बन्द कर दूगा। असहयोग उत्तरोत्तर बढता चला जायगा। सरकार को कम-से-कम अडचन मे डालने के लिए मैने यह मार्ग ग्रहण किया है। अछूतपन मिटाने के लिए मै काम न कर सकू, तो मै जी नही सकता। मगर सरकार यह चाहे कि अस्पृश्यता-निवारण का काम करने के लिए जीने के बजाय मै भले ही मर जाऊ तो मै लाचार हू।"

उस समय तो मेजर भडारी चले गये, लेकिन दोपहर को वह फिर समझाने के लिए आये। बोले, "विशेष खुराक नही तो उबली हुई दाल, शाक ढाबे से भेजा जायगा, उसे ले ले।"

गाधीजी बोले, "यह खुराक मै चार दिन से ज्यादा नही लूगा।"

मेजर ने कहा, "खुराक आपको माफिक आये तव भी !"

गाधीजी ने उत्तर दिया, "हा, यह उत्तरोत्तर वढनेवाला असहयोग है। सारा दारोमदार इसपर है कि सरकार का रुख कैसा है। इतने से सरकार न पिघले, तो मुझे अपनेको अधिक कष्ट देना है। मान लीजिये, वह मुझे मरने दे तो अस्पृश्यता-निवारण का काम वेहद आगे वढेगा। वाहर के लोग मेरे छोटे-से कष्टसहन को वडा वना देगे। दु ख यह है कि सरकार इस कार्य की महत्ता को नही समझती। मुझे इस काम के सिलसिले मे कितने ही पत्रो के उत्तर देने है।"

मेजर ने कहा, "मगर ये लोग तो कह देगे कि आपको जवाव देने से रोका नही गया।"

गाधीजी वोले, "आप शर्ते भूल जाते है। मुझे तो यह चाहिए कि इस काम के लिए मेरे जवाव प्रकाशित हो। वहुत-सी अनिष्ट शक्तिया इस समय काम कर रही है। इन शक्तियो पर मै कोई असर न भी डाल सकू, तो भी इतना तो मै जरूर कर सकता हू कि जो लोग इन अनिष्ट शक्तियो के असर मे आते है, उनपर अपना असर डालू। अगर मै यह काम न कर सकू, तो फिर जीने मे मुझे कोई रस नही रह जायगा। वीस दिन पहले मैने जव प्रथम पत्र लिखा तवसे मेरा चित्त इस मामले मे क्षुब्ध रहता है। आप समझ सकते है कि मुझे कितनी वेदना सहन करनी पडी है। अव इस वेदना को चार दिन से ज्यादा आगे वढाना शारीरिक दृष्टि से मेरे लिए असभव है। शायद एक दिन वाद ही यह सम्भव वन

जाय और मै कल से ही उपवास शुरू कर दू। या सात दिन तक सह्य हो जाय तो तबतक भी ठहर सकता हू। इसका आधार इस-पर है कि सरकार मेरे इस कदम का क्या जवाब देती है।"

अगले दिन इस प्रश्न पर चर्चा हो ही रही थी कि मेजर भडारी फिर आये। उनके पास भारत सरकार का सन्देश था। उसे पढकर उन्होने सुनाया, "भारत सरकार को आपका २४ तारीख का पत्र ३१ तारीख को मिला। इसलिए निर्णय देने मे दो-तीन दिन लगेगे। इस मामले मे हम खूब विचार कर रहे है। इस बीच मि० गाधी अपने भोजन का अकुश मुल्तवी रखे तो अच्छा है।"

गाधीजी ने अकुश को मुल्तवी रखना स्वीकार कर लिया। इस पत्र की भाषा से वह बहुत प्रभावित हुए। उन्होने इस पत्र को बम्बई सरकार पर जोर का तमाचा माना। जो कुछ भी हो, तीसरे दिन ही भारत सरकार का जवाब आया। उसे पढकर गाधीजी ने कहा, "ऐसा अच्छा जवाब सरकार की तरफ से कभी मिला ही नही।"

सरकार ने गाधीजी की एक-एक माग मजूर करली थी। इतना ही नही, मानो जल्दी मन्जूर न करने की माफी भी मांगी। गाधीजी ने अपने पर जो शर्ते लगाई थी, उनके पालन के बारे मे भी पूरा विश्वास प्रकट किया था।

कीमती गहने पहनना शोभा नहीं देता

१९३३ के नागपुर-प्रवास मे गाधीजी भगियो की वस्ती मे भी गये थे। श्री अभ्यकर और श्रीमती अभ्यकर ने भगियो की ओर से उनका स्वागत किया। इसी समय श्रीमती अभ्यकर गाधीजी के पास आई और अपनी कलाई से सोने की दोनों चूडिया उतारकर उनको देते हुए करुण स्वर मे वोली, "आजकल पतियो ने अपनी पत्नियो के पास क्या छोड़ा है! इसलिए मैं आपको हरिजन-सेवा के लिए यही कुछ भेट दे रही हू।"

गाधीजी ने श्री अभ्यकर की ओर देखा। उनकी आखें आंसुओ से तर थी। इस घटना का उल्लेख करते हुए अपने भाषण मे गाधीजी ने कहा, "श्रीमती अभ्यकर ने अपनी जैसी सैकडो वहनो की ओर से जो कुछ कहा, उसका मेरे दिल पर गहरा असर हुआ। मैंने अपने हृदय को पत्थर का वना लिया है। मेरी आखो से आसानी से आसू नही निकलते। किन्तु इन शब्दो ने मुझे विचलित कर दिया है। मैं मानता हू कि कितने ही व्यापारियो, डाक्टरो और गृहस्थो को भिखारी वनाने मे मै कारण रहा हू, पर उसका मुझे दु ख नहीं है, वल्कि खुशी ही है। श्रीमती अभ्यकर, जो अपने पति का अनुगमन करते हुए भगियो मे ओतप्रोत हो जाना चाहती है, सोने की चूडिया क्यो पहने—भारत जैसे गरीव देश मे, जहा एक पैसे का अन्न लेने के लिए लोग मीलो से दौडे आते हैं, जो दीन-दुखियो की चिन्ता रखना चाहता है, उसे कीमती गहने पहनना शोभा नही देता।"

मैंने भी यही किया था

ठक्करवापा ने एक पढे-लिखे भगी ब्राह्मण के सबध मे एक लेख लिखा था। पढा-लिखा ब्राह्मण भगी-पने का काम करे, यह बात निश्चय ही प्रशसनीय है, परन्तु उस व्यक्ति ने अधिक यश के लोभ मे अपनी विद्वत्ता के वारे मे अतिशयोक्ति से काम लिया।

लेकिन यह बात कबतक छिप सकती थी। आखिर ठक्कर-बाप्पा को सूचना मिली। उन्होने पूछताछ करने के बाद वह लेख लिखा और 'हरिजन सेवक' मे प्रकाशनार्थ भेज दिया।

महादेव देसाई वह लेख गाधीजी के पास ले गये। उस समय गाधीजी लेटे हुए थे। पास ही कस्तूरबा खडी थी। गाधीजी सब-कुछ सुनकर बोले, "दु ख की बात है। ठक्करबापा का लेख तो छापना ही पडेगा। इस व्यक्ति के पिता का पत्र भी छाप दो। इसे ठक्करबापा ने प्रसिद्धि दी थी, इसलिए भूल-सुधार भी उन्ही को करनी चाहिए। ठगाये तो हम सभी जा सकते है, पर ऐसी दशा मे अपने ठगाये जाने की वात प्रकाशित किये विना छुटकारा नही।"

उस व्यक्ति का नाम श्री अमल गोस्वामी था। गाधीजी को लगा कि कही इसके बारे मे कोई बुरी धारणा न बना ले। इस-लिए वह अत्यन्त विनम्र भाव से हँसे। बोले, "मैने भी क्या ऐसा ही नही किया था ? जब मै विलायत पढने गया था तब क्या मैंने

अपनेको अविवाहित सिद्ध करने का प्रयत्न नही किया था ?"

यह कहकर उन्होने वा की ओर देखा, पर वह वेचारी तो कुछ समझी नही, चकित होकर गाधीजी की ओर देखती रही। इसपर गाधीजी बोले, "इन वेचारी को कुछ खवर नही है। यह तो इतनी भली है कि इन्होने मुझे माफ ही नही कर दिया, बल्कि उस बात को भूल भी गई।"

वा को अब भी कुछ याद नही आया। तव महादेव देसाई ने उनसे कहा, "वा, वापूजी लगभग पचास वर्ष पुरानी बात कह रहे है। 'आत्मकथा' मे इन्होने इसका विस्तार से वर्णन किया है।"

फिर गाधीजी ने वह सारी कहानी कह-सुनाई। वा बोली, "हा, अव कुछ याद आता है।"

गाधीजी बोले, "मैने ठीक कहा था न ? तुम इतनी भली हो कि तुमने मुझे माफ तो कर ही दिया, पर इस सारी कहानी को भी भूल गई हो।

कस्तूरबा खिलखिलाकर हँस पडी। गाधीजी अपना बचाव करते हुए बोले, "मै अकेला ही ऐसा नही करता था। उस समय बहुत-से युवक ऐसा ही किया करते थे। छोटी अवस्था मे ही भारत से विवाहित होकर वे विलायत जाते थे और वहा इतनी आयु-वाला कोई विवाहित लडका मिलता नही था। अपने-आपको विवाहित वताने मे उन्हे देश की लाज जाती हुई दिखाई देती थी। इसलिए वे सव अपनेको अविवाहित वताते थे। यही वात मेरे सवध मे थी। मै तो घर पर स्त्री ही नही, एक बच्चा भी छोड गया था।"

लेकिन तुरन्त उन्होने फिर कहा, "मैने देश की लाज रखने के लिए नही, वल्कि कुआरी लडकियो के साथ घूम-फिर सकने के लिए ही झूठ वोला था।"

इतना कहकर गाधीजी गम्भीर हो गये।

: २५ :

अपने जैसे आदमी मिल जाते हैं तो हमेशा आनन्द होता है

नौआखाली-प्रवास मे घूमते-घूमते गाधीजी एक दिन आता-खोरा गाव पहुचे। शाम को वह एक वूढे के घर गये। वूढा वहरा था। शरीर से अशक्त था, परन्तु गाधीजी के आने पर वह उठकर खड़ा हो गया। गाधीजी ने वडे प्रेम से उसके गाल पर चपत लगाई, तभी उसकी पत्नी वहा आ गई। उसके पास कपूर की दो मालाए थी। एक उसने वूढे को दी, दूसरी अपने पास रखी। फिर उन दोनों ने गाधीजी को वे मालाए पहनाई। वुढिया काप रही थी। उसने गाधीजी के हाथ पकड लिये। अपने सारे शरीर पर लगाए, मानो वड़ी पावनता अनुभव की। उसने दो मीठे नारियल खासतौर से रख छोडे थे। उन्हे ले आई और उनका पानी पीने का आग्रह करने लगी।

यह दृश्य देखकर मनु को शवरी के वेरो की याद आ गई। जैसे प्रेम से प्रभु राम ने शवरी के वेर खाये थे वैसे ही प्रेम से गाधीजी ने नारियल का पानी पिया। शाम को खाने के वाद वह

तुझे अपने हस्ताक्षर दे दूगा।"

इसके उत्तर मे कौमुदी ने अपने गले का स्वर्णहार उतार लिया। गुथी हुई लम्वी वेणी मे उलझे हार का निकालना सहज नही था, पर कौमुदी तो मालावार की निर्भय वाला थी। उसे सहस्रो नर-नारियों के आगे वेणी में से हार निकालने में तनिक भी सकोच नही हुआ। दातों तले उगली दवाए सव लोग देखते रहे। गाधीजी ने पूछा, "तूने अपने माता-पिता से आज्ञा ले ली है?"

विना कोई उत्तर दिये उसने कानो मे से रत्नजड़ित वुन्दे भी निकाल लिये। जनता की हर्प-ध्वनि से सभा-स्थान गूज उठा। गांधीजी ने फिर पूछा, "तूने इन आभूषणों को देने के लिए अपने माता-पिता से आज्ञा ले ली है न?"

कौमुदी कुछ उत्तर देती, इससे पहले ही किसीने कहा, ' इसका पिता तो यहीपर है न। मानपत्रो की नीलामी मे वही तो वोली लगवाकर आपकी मदद कर रहा है। वह भी अपनी लडकी को तरह अच्छे कामो में दिल खोलकर रुपया देनेवाला आदमी है।"

अव गाधीजी ने कौमुदी से कहा, "तुम्हे यह तो मालूम होगा कि ये गहने दे देने के वाद अव फिर नये गहने नही वनवा सकोगी।"

कौमुदी ने यह शर्त दृढतापूर्वक स्वीकार कर ली। गांधीजी ने हस्ताक्षर करने के वाद यह वाक्य और लिख दिया, "तेरे इन आभूपणों की अपेक्षा तेरा त्याग ही सच्चा आभूपण है।"

के लिए यह कठिन नही है, या फिर तुझे अपने लिए एक ऐसा वर ढूढना होगा जो तेरे आभूपण-सन्यास का विरोधी न हो। स्पष्ट वात जो हो मुझसे कह दे।"

गाधीजी की वाते सुनकर कौमुदी कई क्षण तक उनपर विचार करती रही, फिर उसने केवल एक वाक्य कहा, "मै ऐसे ही वर को पसद करूगी जो मुझे गहने पहनने के लिए वाध्य नही करेगा।"

गाधीजी की आखे डबडवा आई। बोले, "अवतक मैंने अन्नपूर्णा को ही ऐसा पाया था। उसका विवाह हो चुका था, फिर भी उसने अपने त्याग के अनन्तर आभूषणो का कभी स्पर्श तक नही किया। अन्त तक अपना वचन निभाया। आज मैंने कौमुदी तुझे पाया।"

: २८ :

मैं तो उसीको सुन्दर कहता हूं जो सुन्दर काम करता है

सन् १९३४ के प्रवास में त्रिवेन्द्रम में एक दिन एक सत्तरह वर्ष की लड़की गाधीजी के दर्शन करने आई। उसे देखकर उन्होने पूछा, "तुम कौन हो ?"

उसने जवाव दिया, "एक छोटी-सी लडकी।"

वह लडकी वहुत सारे जेवर पहने हुए थी। यह देखकर गांधीजी वोले, "एक छोटी-सी लड़की का इन गहनों से क्या प्रयोजन है ?"

के लिए यह कठिन नही है, या फिर तुझे अपने लिए एक ऐसा वर ढूढना होगा जो तेरे आभूषण-सन्यास का विरोधी न हो। स्पष्ट बात जो हो मुझसे कह दे।"

गाधीजी की बाते सुनकर कौमुदी कई क्षण तक उनपर विचार करती रही, फिर उसने केवल एक वाक्य कहा, "मै ऐसे ही वर को पसद करूगी जो मुझे गहने पहनने के लिए बाध्य नही करेगा।"

गाधीजी की आखे डबडबा आई। बोले, "अबतक मैने अन्नपूर्णा को ही ऐसा पाया था। उसका विवाह हो चुका था, फिर भी उसने अपने त्याग के अनन्तर आभूषणो का कभी स्पर्श तक नही किया। अन्त तक अपना वचन निभाया। आज मैने कौमुदी तुझे पाया।"

: २८ :

मैं तो उसीको सुन्दर कहता हूं जो सुन्दर काम करता है

सन् १९३४ के प्रवास में त्रिवेन्द्रम मे एक दिन एक सत्तरह वर्ष की लडकी गाधीजी के दर्शन करने आई। उसे देखकर उन्होने पूछा, "तुम कौन हो ?"

उसने जवाब दिया, "एक छोटी-सी लडकी।"

वह लडकी बहुत सारे जेवर पहने हुए थी। यह देखकर गाधीजी बोले, "एक छोटी-सी लडकी का इन गहनो से क्या प्रयोजन है ?"

के लिए यह कठिन नही है, या फिर तुझे अपने लिए एक ऐसा वर ढूढना होगा जो तेरे आभूषण-सन्यास का विरोधी न हो। स्पष्ट बात जो हो मुझसे कह दे।"

गाधीजी की बाते सुनकर कौमुदी कई क्षण तक उनपर विचार करती रही, फिर उसने केवल एक वाक्य कहा, "मै ऐसे ही वर को पसद करूगी जो मुझे गहने पहनने के लिए बाध्य नही करेगा।"

गाधीजी की आखे डबडबा आई। बोले, "अबतक मैंनें अन्नपूर्णा को ही ऐसा पाया था। उसका विवाह हो चुका था, फिर भी उसने अपने त्याग के अनन्तर आभूषणो का कभी स्पर्श तक नही किया। अन्त तक अपना वचन निभाया। आज मैंने कौमुदी तुझे पाया।"

: २८ :

मैं तो उसीको सुन्दर कहता हूं जो सुन्दर काम करता है

सन् १९३४ के प्रवास में त्रिवेन्द्रम में एक दिन एक सत्तरह वर्ष की लड़की गाधीजी के दर्शन करने आई। उसे देखकर उन्होने पूछा, "तुम कौन हो ?"

उसने जवाब दिया, "एक छोटी-सी लड़की।"

वह लडकी बहुत सारे जेवर पहने हुए थी। यह देखकर गांधीजी बोले, "एक छोटी-सी लड़की का इन गहनो से क्या प्रयोजन है ?"

आज मैंने कौमुदी तुझे पाया

गाधीजी जिस दिन कालीकट से चलनेवाले थे, उस दिन कौमुदी अपने पिता के साथ गाधीजी के दर्शन करने आई। वड-गरा मे इस लडकी ने अपने आभूषण दे दिये थे। गाधीजी ने इस निश्छल लडकी से पूछा, "क्या तू घर से ही आभूपण त्यागने का निश्चय करके चली थी या उसी सभा मे अपना यह निर्णय कर लिया था?"

उत्तर दिया उसके पिता ने। वोले, "घर से ही निश्चय करके आई थी। हम लोगो से इसने पूछ लिया था।"

गाधीजी वोले, "पर यह तो वता, तेरी मा तुझे इस तरह आभूपणविहीन देखकर नाराज तो नही है?"

कौमुदी ने उत्तर दिया, "नाराज भले हो, पर मुझे विश्वास है कि वह मुझे गहने पहनने के लिए कभी वाध्य नही करेगी।"

गाधीजी वोले, "लेकिन तेरा विवाह तो अव होगा ही। तेरे पति को तेरा यह आभूपण-सन्यास अच्छा न लगे। उस अवस्था मे तू क्या करेगी? मेरे सामने एक नैतिक कठिनाई है। तेरे इस अद्भुत आभूपण-त्याग पर मैने 'हरिजन' के लिए एक लेख लिखा है। मैने उसमे लिखा है कि तू अव कभी आभूपण नही पहनेगी। अगर तू ऐसा करने को तैयार नही है, तो उस लेख का वह अश मैं वदल दूगा। दो वाते है। या तो अपने भावी पति की इस इच्छा का तुझे सामना करना पड़ेगा, एक मालावारी वाला

के लिए यह कठिन नही है, या फिर तुझे अपने लिए एक ऐसा वर ढूढना होगा जो तेरे आभूषण-सन्यास का विरोधी न हो। स्पष्ट बात जो हो मुझसे कह दे।"

गाधीजी की बाते सुनकर कौमुदी कई क्षण तक उनपर विचार करती रही, फिर उसने केवल एक वाक्य कहा, "मै ऐसे ही वर को पसद करूगी जो मुझे गहने पहनने के लिए बाध्य नही करेगा।"

गाधीजी की आखे डबडबा आई। बोले, "अबतक मैने अन्नपूर्णा को ही ऐसा पाया था। उसका विवाह हो चुका था, फिर भी उसने अपने त्याग के अनन्तर आभूषणो का कभी स्पर्श तक नही किया। अन्त तक अपना वचन निभाया। आज मैने कौमुदी तुझे पाया।"

: २८ :

मैं तो उसीको सुन्दर कहता हूं जो सुन्दर काम करता है

सन् १९३४ के प्रवास मे त्रिवेन्द्रम मे एक दिन एक सत्तरह वर्ष की लडकी गाधीजी के दर्शन करने आई। उसे देखकर उन्होने पूछा, "तुम कौन हो ?"

उसने जवाब दिया, "एक छोटी-सी लडकी।"

वह लडकी बहुत सारे जेवर पहने हुए थी। यह देखकर गाधीजी बोले, "एक छोटी-सी लड़की का इन गहनो से क्या प्रयोजन है ?"

उस लडकी का नाम था मीनाक्षी। उसने जवाव दिया, "क्योकि मैं चाहती हू कि मैं ऐसी ही एक छोटी-सी लडकी वनी रहू।"

गाधीजी वोले, "तव तो तुझे गहने नही पहनने चाहिए।"

और उन्होने कौमुदी के आभूषण-सन्यास की कहानी सुनाते हुए कहा, "देखो, वह वेचारी कौमुदी भी तो १६ वर्ष की थी। तो भी उसने अपने तमाम गहने उतारकर मुझे दे दिये। तुम तो उससे एक वर्ष वडी हो।"

मीनाक्षी की आखे चमक उठी। वोली, "तो मै भी अपने सारे आभूषण उतारकर दे देना चाहती हू।"

गाधीजी ने पूछा, "तुमने अपने माता-पिता की आज्ञा ले ली है न ?"

मीनाक्षी वोली, 'आज्ञा तो मिल ही जायगी।"

गाधीजी ने कहा, "मै जानता हू कि मालावार की लडकियाँ स्वतत्र प्रकृति की होती है।"

मीनाक्षी ने पूछा, "तो क्या ये गहने आपको दे दू ?"

गाधीजी वोले, "हा, हरिजनो को दे दो। अगर तुम मुझे एक सच्चा हरिजन समझती हो तो लाओ, मुझे ये गहने दे दो और अगर मैं तुम्हारी दृष्टि मे एक पाखण्डी हू तो फिर मुझे ये गहने मत दो। मैं तो सभी लडकियो को गहने देने के लिए ललचाया करता हू। मैं जानता हू कि लडकियो के लिए यह त्याग कितना कठिन है। हमारे समाज मे आज अनेक प्रकार के फैशन देखने में आते हैं, पर मैं तो उसीको सुन्दर कहता हूं, जो सुन्दर काम करता है।"

मीनाक्षी बोली, "और अगर मैं अपने-आपको ही दे दू तो?"

गाधीजी ने कहा, "हा, तुम्हारी बहन तो है ही, अब तुम भी मेरे पास रह सकती हो। लेकिन मै तुम्हे सोचने-समझने के लिए एक रात का समय देता हूं।"

दूसरे दिन मीनाक्षी फिर आई। उसके शरीर पर एक भी गहना नही था। उसके पिता पर बहुत कर्ज था। वह कर्ज चुकाने के लिए उसने अपने सब गहने पिताजी को दे दिये थे और उसने निश्चय कर लिया था कि वह फिर कभी जेवर नही पहनेगी। उसके पिता उससे सहमत थे, पर मा को राजी करना कुछ कठिन मालूम देता था। इसलिए एक दिन फिर वह अपने माता-पिता के साथ गाधीजी के पास आई और उसने हरिजन-कार्य के लिए एक सोने की चूडी और गले का हार दिया। गाधीजी को सबकुछ मालूम हो चुका था। उन्होने उसके पिता से कहा, "आप मुझे ये चीजे मत देना। मीनाक्षी के गहने से जितना कर्ज चुका सकते हैं चुका दे। मेरी लड़की फिर कभी आपसे जेवर नही मागेगी।"

मीनाक्षी के गालों पर आसुओ की धारा बह रही थी। गाधीजी फिर उसकी माता की ओर मुडे। बोले, "अपनी बेटी के इस अद्‌भुत त्याग पर आशीर्वाद देने में आपको क्या आपत्ति है?"

मा नें उत्तर दिया, "अभी इसका विवाह करना है न? और हमारे लिए ऐसे वर की खोज करना बड़ा कठिन हो जायगा, जो इसे विना आभूषणो के अगीकार कर ले।"

मीनाक्षी के आसू पोंछते हुए गाधीजी बोले, "इसकी आप-

लोग चिन्ता न करें। समय आने पर एक नही, ऐसे पचास वर मैं मीनाक्षी के लिए ढूढ दूगा। फिर उनमे से आप जिसको चाहे चुन लेना।"

अब मा ने मीनाक्षी को सहर्ष आशीर्वाद दे दिया।

: २९ :

यह लड़की मेरी हजामत बनाने से शर्माती है

गाधीजी उस दिन स्नान-गृह मे ही थे कि राजाजी आ गये। एक क्षण-भर भी तो उन्हे चैन नही मिला। एक के बाद एक मिलनेवाले आते रहे। स्नान-गृह मे ही राजाजी के लिए कुर्सी लगवाई गई। गाधीजी गर्म पानी के टब मे लेटे हुए थे। उन्हे राजाजी के साथ बाते करनी थी। इसलिए मनु से कहा, "मेरी हजामत बना दो।"

मनु ने उत्तर दिया, "आज तो राजाजी बैठे है। मेरा हाथ काप जाय और उस्तरा लग जाय तो ? कल से करूगी।"

गाधीजी विनोद के स्वर मे राजाजी से बोले, "आप बैठे है, इसलिए यह लडकी मेरी हजामत बनाने से शर्माती है।"

राजाजी ने उत्तर दिया, "मूर्ख है। आजकल तो नाई प्रति-दिन पाच रुपये कमाते हैं। बढिया-से-बढिया धन्धा हजामत का है। और अगर बापूजी बिना फीस के सिखलाते हो, तो सीख लेनें जैसा धधा है। तुम्हे कोई काम-धधा न आता हो, तो हेयर कटिग

सैलून खोलकर ऊपर लिख देना, "सर्टीफाइड बाई महात्मा गाधी।' फिर तुम्हारा धधा धड़ल्ले से चल निकलेगा और भूखों मरने की नौबत नही आयगी। बापूजी की नाइन बनना भी बड़े सौभाग्य की बात है। समझी!"

फिर दोनो खिलखिलाकर हँस पड़े। अन्त में कापते हाथों से मनु ने गाधीजी की हजामत बनाई। सौभाग्य से कही भी उस्तरा नही लगा और पहले ही दिन राजाजी ने पीठ थपथपाकर शाबाशी का प्रमाण-पत्र दे दिया।

: ३० :

ईश्वर की मुझपर कैसी अपार दया है

गाधीजी दिल्ली की भंगी बस्ती में ठहरे हुए थे। मई का महीना था। बाजार मे आम आ गये थे। उस दिन मनु ने गाधीजी के लिए एक गिलास में आमों का रस निकाला और उनके पास ले गई। उन्होने पूछा, "आम क्या भाव के थे?"

मनु ने समझा कि गाधीजी मजाक कर रहे है। उसने प्रश्न का कोई उत्तर नही दिया, दूसरे काम मे लग गई। लेकिन जब थोडी देर बाद वह फिर गांधीजी के पास गई तो पाया कि रस वैसे ही रखा हुआ है। उन्होने पीया नही। बोली, "रस पी लीजिये न, बापू।"

गाधीजी ने पूछा, "आम किस भाव के थे, यह तूने पता लगाया?"

मनु क्या जवाब देती ! गाधीजी फिर बोले, "मै तो समझता था कि तू आमो की कीमत पूछ कर आयगी। कीमत पूछने के बाद ही मुझे आम खाने को देने चाहिए। तूने ऐसा नही किया। मेरे कहने पर भी नही किया। मैने सुना है कि बाजार मे दस आने का एक आम बिकता है। अगर ऐसा है, तो मैं बिना आम खाये भी जीवित रह सकता हू । ऐसे महगे फल खाने से मेरा खून बढता नही, घटता है। ऐसी भयंकर महगाई के समय तूने मेरे लिए आम के रस का एक पूरा गिलास भर दिया! चार आमो का मूल्य ढाई रुपये होता है। एक गिलास रस ढाई रुपये का हुआ। यह रस मै भला किस मुह से पी सकता हू !"

यह कहते-कहते गाधीजी बहुत गम्भीर हो उठे। तभी दो निराश्रित बहने उन्हे प्रणाम करने आईं। उनके साथ दो बालक भी थे। गाधीजी ने उन्हे प्यार से अपने पास बुलाया और दो कटोरियो मे करके वह रस उन्हे पीने के लिए दे दिया। फिर बोले, "ईश्वर मेरी मदद पर है, यह उसका प्रत्यक्ष उदाहरण है। मै मन मे बडा दुखी था। सोच रहा था कि मै कहा पडा हूं। मुझमे ही कही कोई-न-कोई बुराई है, नही तो तुझे मेरे लिए इतने महगे आमो का रस निकालने की बात कैसे सूझती ! लेकिन मुझे इस दोष से बचाने के लिए भगवान ने इन दो भोले बालको को भेज दिया। बालक भी वैसे ही भेजे, जैसो की मैं इच्छा रखता था। तू देख तो सही, ईश्वर की मुझपर कैसी अपार दया है !"

मनु गाधीजी की इस व्यथा से थर-थर काप आयी। लेकिन इसी प्रकार तो वह उनकी वेदना को समझ सकी थी।

मैं खूब दौड़ता था जिससे शरीर में गर्मी आ जाती थी

उस दिन गाधीजी श्रीमती अरुणा आसफअली के साथ वाइसराय से मिलने गये हुए थे कि पडित जवाहरलाल नेहरू भगी-बस्ती मे आ पहुचे। एक कोने मे कूदने की रस्सी रखी हुई थी। बस, उसे उठाकर कूदने लगे। मनु से बोले, "तुम्हे रोज सवेरे सौ बार कूदना चाहिए और ऊपर से दूध पी लेना चाहिए। इससे तुम पहलवान बन जाओगी। फिर बुखार कैसे आ सकता है? और तुम्हारे जैसी जवान लडकी को जुकाम भी क्यो हो!"

ये बाते हो ही रही थी कि गाधीजी ने कमरे मे पैर रखा। जवाहरलालजी के हाथ मे रस्सी देखकर बोले, "क्या दोनो कूदने की होड लगा रहे हो?"

सब लोग हँस पडे। हँसते-हँसते जवाहरलालजी बोले, "इस लडकी को रस्सी कूदने के लाभ बता रहा था। वह इस प्रकार करे तो जुकाम और बुखार, जो इसे बार-बार परेशान करते है, भाग जायँ। इसे आसन भी करने चाहिए।"

गाधीजी ने उत्तर दिया, "बिलकुल सच बात है। जब मै इगलैण्ड मे था तो मेरे पास बहुत गर्म कपडे नही थे। वहा बडी सख्त सर्दी थी, फिर भी नहाये बिना अच्छा नही लगता था। इसलिए मै खूब दौडता था, जिससे शरीर मे गर्मी आ जाती थी। मै वहा अपना स्वास्थ्य बढिया रख सका, तो केवल कसरत के

प्रताप से ही। लोगो का यह विचार था कि यदि मै मासाहारी नही बनूगा, तो काम नही चलेगा।"

: ३२ :

मैं तुमसे भूत की तरह काम लेता हूं

बिहार-प्रवास मे एक दिन गांधीजी का वजन लिया, तो एक सौ आठ पौण्ड निकला। दिल्ली मे एक सौ बारह पौण्ड था। शायद काटे मे फर्क हो। लेकिन चार पौण्ड का फर्क कैसे हो सकता है? गर्मी के कारण वजन घटा है। गाधीजी ने खुराक बहुत कम करदी थी। मनु का वजन तो बहुत ही कम था, कुल ८७ पौण्ड। उन्होने पहले भी कई बार मनु का वजन करवाया था। सहसा उन्हे पाच वर्ष पहले की आगाखा महल की बात याद आ गई। बोले, "तुम्हे याद है कि आगाखां महल मे तुम्हारा वजन एक सौ छः पौण्ड था, अब १६ पौण्ड कम है। इसका अर्थ है कि मैं तुमसे भूत की तरह काम लेता हू। या फिर तुम अपने स्वास्थ्य का ध्यान नही रखती।"

सुनकर मनु स्तब्ध रह गई। पाच वर्ष पहले की बात वह भूल गई थी। धीरे-से बोली, "इधर नक्सीर बहुत फूटती है और गर्मी भी बहुत है। आप भी तो चार पौण्ड घट गये है।"

गाधीजी ने उत्तर दिया, "तुम ७८ वर्ष की नही हो। होती तो शायद मैं तुम्हारी दलील पर ध्यान भी देता, लेकिन अब इतना याद रखना कि जबतक तुम्हारा वजन सौ पौण्ड नही हो

जाता, तबतक मैं तुम्हे बेकार समझूगा। तुम्हारा वजन इतना घट गया होगा इसकी तो मुझे कल्पना भी न थी। सूख जरूर गई हो, लेकिन वजन इतना घट गया है यह तो, आज अगर तुम्हारा वजन न लिया होता तो मुझे मालूम ही न होता।"

गाधीजी स्पष्ट ही नाराज थे, इसलिए मनु ने मौन का सहारा लेना ही अच्छा समझा।

: ३३ :

हमारी सभ्य पोशाक तो धोती-कुर्ता है

गाधीजी से यरवदा-जेल में मिलने के लिए एक बार सेठ जमनालाल बजाज कैदी की पोशाक पहनकर आये। उन्होंने बताया कि वह छूट तो गये है, परन्तु चूकि यह मानते है कि वह एक बड़े कैदखाने मे हैं, इसलिए यह पोशाक पहनी है।

गाधीजी बोले, "यह भावना इस पोशाक को पहनकर नही बताई जा सकती। ऐसे तो बहुत-से लोग इस पोशाक को पहनकर बच जाना चाहेगे। इस तरह लोगो का ध्यान अपनी ओर नही खीचना चाहिए। हमें अपनी साधारण पोशाक ही पहननी चाहिए। हा, यदि तुम इस पोशाक को आदर्श मानते हो और हमेशा के लिए ग्रहण करने के लिए तैयार हो तो बात दूसरी है। वैसे सच बात तो यह है कि यह पोशाक भी अग्रेजों की नकल ही है। हमारी सभ्य पोशाक तो धोती-कुर्ता है। मैं यह भी नही मानता कि जाघिया पहनने से खर्च बहुत बच जाता है।"

और उन्होने जमनालालजी को धोती-कुर्ता पहनने की ही सलाह दी।

: ३४ :

अपने लिए लाभदायक मौके को कोई छोड़ता है भला!

बिहार-प्रवास मे मनु का स्वास्थ्य अच्छा नही रहता था। उस दिन भी उसे बुखार था। वह दिन मे साढे बारह बजे सो रही थी। उसे सोता देखकर बापूजी ने स्वय चर्खा तैयार किया और कातना शुरू कर दिया। वह कात ही रहे थे कि मनु जाग उठी। वास्तव मे वह चर्खा तैयार करने के लिए ही चौककर जाग पडी थी। यह देखकर बापूजी खिलखिलाकर हँसने लगे। बोले, "और थोडी देर सो जाओ तो मुझे ज्यादा अच्छा लगे।"

मनु ने पूछा, "लेकिन आपने मुझे जगाया क्यो नही ?"

गाधीजी ने उत्तर दिया, "मुझे देखना था कि मै चर्खा तैयार कर सकता हू या नही। मुझे यह अच्छा मौका मिल गया। अपने लिए लाभदायक मौके को कोई छोडता है भला! तुम्हे स्वय गहरी नीद मे सोते हुए देखकर मै बहुत खुश हुआ।"

यह कहकर उन्होने मनु का कान पकड लिया। वह तुरन्त समझ गये कि उसे बुखार चढा हुआ है, लेकिन वह आराम कर रही थी, इसलिए उनकी नाराजी से बच गई। इतना ही नही, उन्होने मनु के साथ विनोद भी किया।

मुझे 'महात्मा' शब्द में बदबू आती है

एक बार बम्बई के श्री जमनादास एक सभा में बोलने के लिए खडे हुए तो कुछ लोगों ने उनके साथ अशिष्टता का व्यवहार किया। गाधीजी भी उस सभा मे थे। यह देखकर वह खडे होगये और बोले, "किसी सभा में कैसे व्यवहार करना चाहिए, यह हमे जानना आवश्यक है। सभा में जिसे बुलाया है, उसका स्वभाव कैसा है, यह भी जानना चाहिए और उसके अनुकूल ही व्यवहार करना चाहिए। ऐसा न कर सके तो बेहतर है, वहा न जाय। कुछ भाइयो ने इस सभा मे इस नियम का उल्लघन किया है। भाई जमनादास ने जो कुछ कहा वह अक्षरश सही था। 'महात्मा' के नाम से बहुत-से बुरे काम हुए है। मुझे महात्मा शब्द मे बदबू आती है और इसपर भी जब कोई आग्रह करता है कि सब लोग मुझे महात्मा कहे, तव तो मै घबरा जाता हू। मुझे जीना अच्छा नही लगता। मै यदि यह न जानता होता कि ज्यों-ज्यो मै महात्मा शब्द का इस्तैमाल करने से इन्कार कर देता हू, त्यो-त्यो उसका अधिक उपयोग होता जाता है, तव मै जरूर इन्कार कर देता। आश्रम मे प्रत्येक वालक और भाई-बहन को आज्ञा है कि वे 'महात्मा' शब्द का प्रयोग न करे। भाई जमनादास को रोकने-वालो ने मेरे प्रति अविनय किया। हमारी लडाई शान्ति की है और शान्ति विना विनय के नही होती।

इतना सुनने के बाद एक भाई ने सामने की पहली गैलरी मे

खड़े होकर प्रणाम किया और क्षमा मागी। गाधीजी बोले, "इतना काफी है, परन्तु अभी एक-दो भाई और है। क्या वे क्षमा नही मागेगे ? नही मागेगे तो मै कहूगा कि वे स्वराज्य के योग्य नही है।"

तभी सभा मे से आवाजे आई, "खडे होकर क्षमा मागो।"

दो आदमी और खडे हुए और उन्होने क्षमा मागी। गाधीजी को कुछ शान्ति हुई। उन्होने फिर बोलना शुरू किया, क्योकि अभी एक भाई शेप थे। आखिर उन्होने भी खडे होकर क्षमा माग ली।

. ३६ :

जड़ भरत की तरह खाती हो

बिहार-प्रवास मे गाधीजी पटना से रोज किसी-न-किसी गाव जाते थे और फिर वापस लौट आते थे। उस दिन वापस लौटते-लौटते दस बज गये। आते ही मालिश की तैयारी की। बारह बजे बाद गाधीजी ने भोजन किया। मनु के सामने धोने के लिए कपडो का ढेर लगा हुआ था। तीन बजे तक वह छुट्टी पा सकी। सवा तीन बजे खाने के लिए बैठी। खोपरा और लीची के अतिरिक्त कुछ नही बचा था। जल्दी-जल्दी उन्हीको खाने लगी। गाधीजी स्नानघर से सबकुछ देख रहे थे। वही से बोले, "जड भरत की तरह खाती हो। सुबह से कुछ नही खाया और इस समय खोपरा जल्दी-जल्दी खा रही हो ! इस तरह कबतक

टिकोगी ? एक साथ इतने अधिक कपडे धोने की क्या जरूरत थी ! मेरा खयाल है कि अब तुम मेरी सेवा बहुत समय तक नही कर सकोगी ।"

मनु भौचक्की-सी रह गई । बडी मुश्किल से इतना ही कह सकी, "अब आराम लेकर स्वस्थ हो जाऊंगी ।"

परन्तु गांधीजी शाम तक उससे नही बोले। बेचारी रो पड़ी। शाम को सदा की तरह प्रार्थना हुई। गाधीजी ने अपनी यात्रा की सब बाते सुनाईं और कहा, "लोग अपने अपराधों को स्वेच्छा से कबूल करने आते है, यह बहुत ही अच्छा चिह्न है। इससे और भी बहुत-से लोगो की हिम्मत बढेगी। उस हिम्मत के लिए जनता के मन मे उनके लिए आदर भी जरूर पैदा होगा। इससे सारे प्रान्त की प्रतिष्ठा तो बढेगी ही, देश में भी उसकी छूत फैलेगी ।"

प्रार्थना से लौटकर मनु ने गाधीजी को दूध दिया। वह खूब थक गई थी, इसलिए सो गई । न गाधीजी कुछ बोले, न वही बोली। लेकिन साढे नौ बजे गाधीजी ने उसे उठाया। उसे सोता देखकर वह बहुत खुश हुए थे। इसीलिए फिर बोलने लगे थे।

: ३७ :

उपवास एक बड़ा पवित्र कार्य है

सन् १९२५ की घटना है। एक नवयुवक चीनी विद्यार्थी भारत आया। शीघ्र ही वह गुरुदेव रवीन्द्रनाथ की 'विश्व भारती'

मे प्रविष्ट होकर वहा अध्ययन करने लगा। कुछ दिन तक वह बडे सुख से रहा। परन्तु अचानक न जाने कैसे उसपर जासूस होने का सन्देह हो गया। उसके ऊपर निगरानी रखी जाने लगी। इस बात से वह इतना घबरा गया कि उसने विश्व-भारती छोडने का निश्चय कर लिया। लेकिन इस परदेश मे वह जाय तो कहा जाय! आखिर उसने गांधीजी को विस्तार से एक पत्र लिखा। गाधीजी उन दिनो कलकत्ता मे थे। उन्होने उसे मिलने के लिए बुलाया। उसके आने पर उन्होने बडे प्यार के साथ उससे बाते की। कहा, "शान्तिनिकेतन के लोग विदेशियो का सदा स्वागत करते है। उन्होने तुमपर सन्देह क्यो किया? क्या तुम भेदिये हो?"

युवक ने दृढतापूर्वक उत्तर दिया, "निश्चय ही कोई गलत-फहमी हो गई, मै भेदिया नही हू। केवल एक विद्यार्थी हू। और भारत का अध्ययन करने की जिज्ञासा मेरे मन मे है।"

गाधीजी ने कहा, "मै तुम्हारे कथन को सत्य मानता हू। क्या मै तुम्हारी जिम्मेदारी लेकर तुम्हे शान्तिनिकेतन वापस भेज दू?"

लेकिन उस युवक ने कहा, "कृपया मुझे अपने ही साथ रखिये। मुझे अपने आश्रम मे जगह दीजिये।"

गाधीजी बोले, "परन्तु मेरा आश्रम शान्तिनिकेतन से कही अधिक कठिन साधना चाहता है। अपने अध्ययन के अलावा तुम्हे काफी शारीरिक श्रम भी करना होगा।"

युवक ने उत्तर दिया, "चीनी शरीर-श्रम के अभ्यस्त होते है।"

गाधीजी ने उसे न केवल आश्रम मे रख लिया, वल्कि उसका एक भारतीय नाम भी रख दिया। वह नाम था 'शान्ति' उसने वहुत जल्दी चर्खा चलाना सीख लिया। उसको कपडे धोने का और रसोईघर के लिए पानी लाने का काम सौंपा गया। जैसे-जैसे समय वीतता गया वह और भी अधिक परिश्रम करने लगा। ऐसा कोई काम न था, जो वह न करता था। साथ ही, वह अध्ययन भी करता था।

एक दिन उसने अपने जीवन की कहानी लिख डाली। उसे शायद कई दिन लगे थे। उसने वह कहानी गाधीजी को दी। कहा, "यह है सक्षेप में मेरे जीवन की कहानी। हिन्दुस्तान आने से पहले दूसरे सैकड़ो चीनियो के समान मै भी सिगापुर में घृणित जीवन विताया करता था। यहा रहकर मुझे आन्तरिक प्रेरणा हुई कि मैं अपनी सारी वाते आपके सामने खोलकर रखू। इसे पढ़ लीजिये और मुझे आत्म-शुद्धि के लिए दस दिन का उपवास करने की आज्ञा दीजिये।"

गांधीजी को वडा आश्चर्य हुआ। लेकिन वह समझ गये कि यह युवक एक आध्यात्मिक कशमकश के वीच से गुजर रहा है। उन्होने कहा, "मै समय निकालकर तुम्हारी रचना अवश्य पढूगा। लेकिन जवतक पढ न लू, उपवास आरम्भ मत करो। उपवास एक वडा पवित्र कार्य है। उसे करनेवाले को उसके योग्य होना वहुत आवश्यक है।"

गाधीजी ने उस पत्र को पढा। वह उस युवक की स्पष्टता और निष्कपट आत्मस्वीकृति से वहुत प्रभावित हुए। उसे वुलाया और उपवास करने की आज्ञा दे दी। दस दिन तक वह युवक

केवल जल पर ही रहा। गाधीजी प्रतिदिन उसके पास जाते और पन्द्रह-बीस मिनट तक उससे बाते करते रहते।

दस दिन पूरे हुए। युवक ने उपवास समाप्त करके कुछ प्रण किये। वे प्रतिज्ञाए दो कागजो पर लिखी गई दोनो पर शान्ति ने हस्ताक्षर किये और गाधीजी ने साक्षी की। एक प्रति गाधीजी के पास रही और दूसरी शान्ति के पास। अव जैसे शान्ति के कधो से सारा वोझ उतर गया था। कुछ दिन बाद वह चीन लौट गया और वहा एक समाचार-पत्र का सम्पादक हो गया। लेकिन नाम उसका अव भी शान्ति ही था।

: ३८ :

जहां हरिजनों को मनाही है वहां हम कैसे जा सकते हैं ?

हरिजन-प्रवास के समय गाधीजी उडीसा भी गये थे। वही पर सप्तपुरियो मे प्रसिद्ध जगन्नाथपुरी है। भारतभर के यात्री यहा आते है। महात्माजी के साथ कस्तूरबा, महादेवभाई और दूसरे वहुत-से लोग थे। सायकालीन प्रार्थना के वाद जव महात्माजी आराम करने चले गये, तव कस्तूरबा ने महादेवभाई से कहा, "मैं जगन्नाथजी के दर्शन करना चाहती हू। तुम चलोगे मेरे साथ?"

महादेव तुरन्त तैयार हो गये। वे दोनो मदिर गये। और भी लोग साथ मे थे। कुछ लोगो ने बाहर से दर्शन किये, लेकिन ये दोनो अदर चले गये। जब सव लोग लौटे, तो महात्माजी को

पता लगा। वह एकाएक बेचैन हो उठे। उनका दिल धडकने लगा। उन्होने दर्द-भरे स्वर मे उनसे कहा, "तुम लोग मन्दिर कैसे गये ? जहा हरिजनो को मनाही है वहा हम कैसे जा सकते है ? मै भी तो अपनेको हरिजन मानता हू। मैं औरो को माफ कर देता, लेकिन तुम दोनो तो मुझसे एकरूप हो गये हो। जहा हरिजन नही जा सकते वही तुम हो आये, मै यह कैसे सहन करूं ? अपनी वेदना किससे कहू ? तुम गये तो मानो मैं ही गया। मेरे साथ के लोगो को देखकर ही लोग मेरी परीक्षा करते है।"

आगे उनसे वोला नही गया। दिल की धडकन तेज हो उठी। जो आसपास थे, वे सव घवरा गये। तुरन्त डाक्टर को वुलाया गया। कस्तूरवा प्रभु से प्रार्थना करने लगी। महादेवभाई कुछ कह ही नही पा रहे थे। वहुत देर वाद कही जाकर महात्माजी का मन शान्त हुआ। दिल की धडकन भी कम हो गई। महादेव-भाई ने लिखा है, "सन्तो की सेवा करना और उनके साथ रहना वहुत कठिन है। कव क्या हो जाय, कुछ पता नही।"

: ३९ :

मुझे तुम-जैसा अल्पजीवी थोड़े ही वनना है

एक वार सुपरिचित जैन विद्वान पडित सुखलालजी को आश्रम मे भोजन के लिए आमन्त्रित किया गया। प्रार्थना के वाद स्वय गाधीजी ने सवको भोजन परोसा। गेहूं की रोटिया और

साग परोसकर वह बोले, "मीठा कुछ भी नही है। क्या यह सब भायेगा ? यहा तो सदा ही फीकापन रहता है। आपने कभी फीका खाना खाया है ?"

सुखलालजी बोले, "जी, जैनियो का आयंबिल भोजन फीका ही होता है।"

गाधीजी ने हँसकर कहा, "तब तो तुम्हे यह आश्रम सुहा जायगा।"

उस दिन एकादशी थी। गाधीजी नारियल का दूध और खजूर आदि लेकर ही बैठे थे कि एक सज्जन उनसे मिलने के लिए आ पहुचे। गाधीजी ने उनसे कहा, "जरा बैठिए, मै भोजन करके अभी आता हू।"

लेकिन गाधीजी का भोजन क्या, पाच-दस मिनट मे समाप्त होनेवाला था। वह सज्जन बैठे-बैठे ऊब गये और बडी नम्रता से बोले, "आपको तो बहुत समय लग गया।"

गाधीजी हँस पडे। कहा, "अभी एक घटा कहा हुआ है ?"

वह सज्जन बोले, "ऐसे फलाहार और खजूर-भर खाने मे एक घटा लगाना तो आश्चर्य की बात है !"

गाधीजी ने उत्तर दिया, "इसमे आश्चर्य कैसा ! मुझे कोई तुम जैसा अल्पजीवी थोडे ही बनना है।"

वह सज्जन बोले, "तो क्या आप इतने धीरे खाने से दीर्घ-जीवी बन जायगे ?"

गाधीजी ने उत्तर दिया, "जरूर, मुझे तो पूरे सौ वर्ष जीना है और उसका उपाय यही है।"

हे ईश्वर, इस धर्मसंकट में मेरी लाज रखना

पहले सविनय अवज्ञा आन्दोलन के बाद गाधीजी जब दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटे, तो उन्होने बम्बई में बस जाने का निश्चय किया। लेकिन घर लिये अभी बहुत दिन नही हुए थे कि उनका दूसरा लडका मणिलाल सख्त वीमार हो गया। उसे काल ज्वर ने घेर लिया। बुखार उतरता ही नही था। घवराहट तो थी ही, पर रात को सन्निपात के लक्षण दिखाई देने लगे थे।

गाधीजी ने डाक्टर से सलाह ली। उसने देखभाल करके कहा, "दवा से कोई लाभ होनेवाला नही है। अब तो इसे अण्डे और मुर्गी का शोरबा देने की जरूरत है।"

गाधीजी बोले, "डा० साहब, हम लोग शाकाहारी है। मेरी इच्छा लड़के को इनमें से एक भी चीज देने की नही है। क्या आप कोई और उपाय नही बता सकते ?"

डाक्टर ने कहा "आपके लड़के के प्राण सकट में है। दूध और पानी मिलाकर दिया जा सकता है। पर उससे पूरा पोषण नही मिल सकता। दवा के नाम पर तो आप ये चीजे दे ही सकते है।"

गाधीजी ने उत्तर दिया, "आप जो कहते है, वह तो ठीक है। आपको ऐसा ही कहना चाहिए, पर मेरी जिम्मेदारी बहुत बड़ी है। यदि लड़का वडा होता, तो उसकी इच्छा जानने का

प्रयत्न करता और जो वह चाहता उसे वही करने देता, पर अब तो इसके लिए मुझे ही विचार करना है। मनुष्य के धर्म की कसौटी ऐसे ही अवसरो पर होती है। चाहे ठीक हो, चाहे गलत, मैने तो इसको धर्म माना है कि मनुष्य को मास आदि न खाना चाहिए। हर बात की एक सीमा होती है। जीने के लिए भी कुछ वस्तुओ को हमे नही ग्रहण करना चाहिए। मेरे धर्म की मर्यादा ऐसे समय मास आदि का उपयोग करने से रोकती है।"

और उन्होने पानी का उपचार करने का अपना निश्चय डाक्टर को बताया। डाक्टर समझदार था। उसने गाधीजी के दृष्टिकोण को समझने का प्रयत्न किया और वह उनकी प्रार्थना पर बीच-बीच मे आकर मणिलाल की जाच करने के लिए तैयार हो गया।

उपचार चलने लगा। तीन दिन बीत गये, पर कोई लाभ होता दिखाई नही दिया। रात को वह बडबडाता था। बुखार भी १०४ डिग्री तक पहुच जाता था। यह देखकर गाधीजी घबराए। सोचने लगे, यदि वह बालक को खो बैठे तो दुनिया क्या कहेगी! बडे भाई क्या कहेगे! क्यो न दूसरे डाक्टरो को बुला लिया जाय। किसी वैद्य को भी तो बुलाया जा सकता है। मा-बाप को अपनी अधूरी अक्ल आजमाने का क्या हक है!

एक ओर यह चेतावनी थी, तो दूसरी ओर ईश्वर मे श्रद्धा रखकर अपना काम करने का सकल्प भी था। दिन-भर मन मे इसी तरह उथल-पुथल मचती रही। रात हुई। वह मणिलाल को अपने पास लेकर सोए हुए थे। सहसा उन्होने निश्चय किया कि उसे भीगी चादर की पट्टी मे रखा जाय। बस, वह उठे। कपडा लिया,

ठण्डे पानी मे डुबोया और निचोडकर उसमें सिर से पैर तक उसे लपेट दिया। ऊपर से दो कम्बल उढ़ा दिये। सिर पर भीगा हुआ तौलिया भी रख दिया। शरीर तवे की तरह तप रहा था और बिलकुल सूखा था। पसीना तो आता ही नही था।

गाधीजी बहुत थंक गये थे। वह मणिलाल को उसकी मा को सौपकर आध घण्टे के लिए खुली हवा मे ताजगी और शान्ति प्राप्त करने के उद्देश्य से चौपाटी की तरफ चले गये। रात के दस बजे होगे। मनुष्यो का आवागमन कम हो गया था, पर उन्हे तो इस बात का ध्यान ही नही था। वह तो विचार-सागर मे गोते लगा रहे थे, "हे ईश्वर, तू इस धर्म-सकट में मेरी लाज रखना।" मुह से 'राम-राम' का रटन भी चल रहा था।

कुछ देर बाद वह वापस लौटे। कलेजा घडक रहा था। घर में घुसते ही मणिलाल की आवाज कानो में पड़ी, "बापूजी आ गये?"

"हा, भाई।"

"मुझे इसमे से निकालिये न, मै जला जा रहा हू।"

"क्यो, क्या पसीना छूट रहा है?"

"मै तो भीग गया हू। अब मुझे निकालिये न, बापूजी।"

गाधीजी ने देखा, सचमुच पसीना आ रहा है। बोले, "मणिलाल, घबडा मत, अब तेरा बुखार चला जायगा। थोडा पसीना और आने दे।"

कुछ देर वह और इसी तरह उसे बहलाते रहे। जब माथे से पसीना बह चला तब चादर खोली और शरीर पोंछा। उसके बाद बाप-बेटे दोनो साथ-साथ सो गये। खूब सोये। सुबह देखा, तो मणिलाल का बुखार बहुत कम हो गया था।

: ४२ .

अपने विरोधी को आप पूरा अवसर दें

सन् १९३८ मे तत्कालीन काग्रेस अध्यक्ष श्री सुभाषचन्द्र बोस ने प० जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में राष्ट्रीय योजना समिति की स्थापना की थी। श्री जे० सी० कुमारप्पा को भी, जो गांधीवादी अर्थशास्त्र के एक आचार्य माने जाते थे, उस कमेटी का सदस्य बनने के लिए आमन्त्रित किया गया था। परन्तु श्री कुमारप्पा इस कमेटी से प्रसन्न नही थे। उनकी दृष्टि में यह हर श्रेणी के किन्तु बेमेल व्यक्तियो का एक गुट मात्र थी। इसलिए उसमे भाग लेने से उन्होने इकार कर दिया।

तब प० जवाहरलाल नेहरू ने गाधीजी से अनुरोध किया कि वह श्री कुमारप्पा को बम्बई आने के लिए कहे।

गाधीजी ने श्री कुमारप्पा को बुलाया, उनसे बाते की, फिर बोले, "आप ऐसा क्यो सोचते है कि आप पूरी-की-पूरी कमेटी को अपनी नीति का कायल नही बना सकेगे? इससे तो आपमे आत्मविश्वास की कमी प्रकट होती है। आपको अपने साथियो पर इतना विश्वास भी नही है कि वे मुक्त मन से आपकी बात सुन ले।"

श्री कुमारप्पा ने उत्तर दिया, "आपका कहना ठीक हो सकता है, किन्तु कबूतर की भाति भोले होने पर भी हमे साप की तरह चालाक बनना ही होगा। दीवार से सर टकराने से क्या लाभ! सदस्यो की नामावली देखते ही मैं समझ गया था कि

वहा बेकार की मगजपच्ची के सिवा और कुछ भी हाथ नही लगेगा।"

गाधीजी बोले, "एक सत्याग्रही के लिए ऐसा दृष्टिकोण शोभा नही देता। अपने विरोधी को आप पूरा अवसर दे और जब ऐसा अनुभव हो कि वहां रहना व्यर्थ ही है, तो त्यागपत्र देकर चले आये। अपने साथियों को समझाने में जो समय लगेगा, वह व्यर्थ नही जायगा। उससे आपका दृष्टिकोण विकसित भी होगा और विशाल भी।"

श्री कुमारप्पा के पास अब कोई उत्तर नही था। उन्हे बम्बई जाना पडा। तीन महीने तक कमेटी के कार्य मे भाग भी लिया। उसके बाद जब उन्होने यह अनुभव किया कि उनका वहां रहना व्यर्थ है तब उन्होने त्यागपत्र दे दिया।

: ४३ .

मैं उचित शब्द खोजने में मग्न था

पजाब मे जलियावाला बाग हत्याकाण्ड की जाच करने के लिए काग्रेस ने जो समिति बनाई थी, गाधीजी भी उसके एक सदस्य थे। उसकी रिपोर्ट तैयार करने का भार भी उन्हीपर था। घर-घर घूमकर उन्होने गवाहिया ली। आखिर जांच समाप्त हुई। वह रिपोर्ट तैयार करने में व्यस्त हो गये।

उस समय वह श्रीमती सरलादेवी चौधरानी के मकान पर ठहरे हुए थे। एक दिन श्री गुरुदयाल मल्लिक उनसे मिलने के

लिए वहा आये। देखा कि दरवाजा भीतर से वन्द है। उन्होने उसे खटखटाया नही। वाहर बैठकर उसके खुलने की प्रतीक्षा करने लगे। एक घण्टा बीता, दूसरा घण्टा बीता तीसरा भी वीत गया, तव कही जाकर वह द्वार खुला। वह अन्दर गये। वडे प्यार से गाधीजी ने पूछा, "क्या वडी देर से इतजार कर रहे थे ?"

मल्लिक साहव उन दिनो युवक थे। किंचित रूखे स्वर में उत्तर दिया, "कुछ-कुछ।"

गाधीजी वोले, "मुझे इस वात का खेद है, किन्तु भाई, मार्शल लॉ के समय एक खास स्थान पर एक दल विशेष द्वारा जोश-खरोश मे आकर जो काण्ड किया गया था, उसके विवरण के सम्वन्ध मे एक वाक्य की पूर्ति करने के लिए मैं उचित शब्द खोजने मे मग्न था।"

: ४४ .

आप ही इसे संक्षिप्त कर लाइये

सन् १९४५ मे गाधीजी ने, जव वह वम्वई मे थे, किसी सवध मे वक्तव्य तैयार किया। उनके सहयोगियो ने जव उसे देखा तो लगा कि वह आवश्यकता से अधिक लम्वा है। उनमे से एक व्यक्ति ने तो यहांतक कह दिया, "आपने जो इतना सारा लिखा है, वह केवल चार पक्तियो मे आ सकता था।"

गाधीजी ने तुरन्त उत्तर दिया, "क्या ऐसी वात है ? तो कृपाकर आप ही इसे सक्षिप्त कर लाइये। मैं आख मीचकर

उसपर हस्ताक्षर कर दूगा।"

यह सुनकर वह आलोचक महोदय मानो स्तब्ध रह गये। कुछ उत्तर न दे सके। तब किसी ज्ञानी पुरुष के वचन की याद दिलाते हुए गाधीजी सहज भाव से बोले, "दूसरे के काम की आलोचना करनेवाले व्यक्ति को आलोच्य विषय की, विधायक रूप से, स्थान-पूर्ति करने के लिए सदैव तैयार रहना चाहिए।"

: ४५ :

आपकी चिन्ता को मैंने चौबीस घण्टे के लिए बढ़ा दिया

सन् १९२१ मे राष्ट्रीय महासभा का छत्तीसवा अधिवेशन अहमदाबाद मे हुआ था। स्वागत-समिति के प्रधानमन्त्री थे श्री गणेश वासुदेव मावलकर। वह प्रान्तीय काग्रेस कमेटी के मेम्बर भी थे। स्वागत-समिति ने यह निश्चय किया कि जो निवास-स्थान बनाये जाय, उनके लिए विशुद्ध खादी का ही प्रयोग किया जाय। इसके लिए बहुत खादी खरीदनी पडी। मावलकरजी को प्रतिदिन १० से लेकर १५,००० रु० तक की हुण्डिया छुडवानी पड़ती थी।

बम्बई कमेटी ने डेढ लाख रुपया देने का आश्वासन दिया था, परन्तु कई महीने बीत गये, रुपया नही आया। रुपया नही आयगा तो हुण्डियां कैसे छुडाई जायगी ?

तभी गाधीजी बम्बई जानेवाले थे। उन्हे सारी स्थिति

समझाते हुए श्री मावलकर ने उनसे प्रार्थना की कि वह बम्बई पहुचकर उन्हे तुरन्त इस आशय का तार देने की व्यवस्था करे कि रुपया उसी दिन रवाना कर दिया जायगा। इससे चिन्ता कुछ तो कम होगी।

उन दिनो तार भेजने मे केवल ६ आने लगते थे। लेकिन दूसरे दिन तार नही मिला। स्वाभाविक था कि श्री मावलकर झुझला जाते। फिर भी उन्होने सोचा कि किसी आवश्यक कार्य मे फस जाने के कारण गाधीजी ऐसा नही कर पाये।

उससे अगले दिन उनका एक पत्र मिला। पत्र क्या, तार का फार्म ही था। उसपर गांधीजी नें स्वय अपने हाथ से मजमून लिखा था। उसीकी पीठ पर उन्होनें यह पत्र लिखा, "प्रिय मावलकर, आपकी चिन्ता को मैंनें चौबीस घण्टे के लिए बढा दिया है, इसका मुझे खयाल है। किन्तु आज छुट्टी का दिन होनें के कारण कुछ अधिक पैसे लग जाते। चूकि आपको निश्चित रूप से रुपये भेजे जानेवाले थे, इसलिए मैने यह जानते हुए भी कि आप कुछ घण्टो तक चिंतित रहेगे, तार के व्यय को बचाना उचित समझा।"

: ४६

व्यायाम से कभी मुंह न मोड़ना

सन् १९३७ मे गाधीजी कलकत्ता मे सुभाषचन्द्र बोस के बड़े भाई शरतचन्द्र बोस के घर ठहरे हुए थे। उन दिनो महादेव

भाई कुछ बहुत व्यस्त रहते थे। घूमने भी नही जा पाते थे। यह देखकर गाधीजी ने श्री गगनबिहारी मेहता से, जो उन दिनो वही रहते थे, कहा, "आप महादेव को अपने साथ घूमने ले जाया करे।"

श्री मेहता उस दिन से बराबर महादेवभाई को अपने साथ घुमाने के लिए ले जाते थे, लेकिन एक दिन काम बहुत था। महादेवभाई थक भी बहुत गये थे। इसलिए उन्होने घूमने जाने में अपनी असमर्थता प्रकट की। तब गाधीजी ने उन्हे झिडक दिया। बोले, "महादेव, किसी दिन तुम बिना भोजन के रह जाओ तो कोई हर्ज नही, किन्तु व्यायाम से कभी तुम मुह न मोडना। जाओ भाई, घूमने के लिए जाओ।"

: ४७ :

सादगी ऐसी सहज-साध्य नहीं है

सत्याग्रह के प्रथम चरण मे ही श्री प्यारेलाल नैयर, जो बाद में गाधीजी के निजी सचिव हुए पढाई छोडकर आश्रम में भर्ती हो गये थे। गाधीजी ने उनसे कहा, "आप मुझे दो निबन्ध लिखकर दीजिये। एक अग्रेजी मे 'असहयोग' पर, दूसरा हिन्दुस्तानी में। उसका विषय आप स्वय चुन सकते है। जैसे 'मैं गाधी के पास क्यों आया ?' ये दोनो निबन्ध तीन बजे तक मुझे मिल जाने चाहिए।"

श्री प्यारेलाल तुरन्त निबन्ध लिखने बैठ गये। उन्होने एक

बजे तक दोनो निबन्ध पूरे करके गाधीजी को दे दिये और गाधीजी दूसरे दिन ही अपने तूफानी दौरे पर निकल पड़े। श्री प्यारेलालजी निबन्ध की बात भूलकर आश्रम के कामो मे लग गये।

एक दिन उन्हे गांधीजी का पत्र मिला। लिखा था, "निबन्ध पढ लिये हैं, पसन्द भी हैं। मैं आपकी लेखन-शक्ति का उपयोग करना चाहता हूं।"

दो दिन बाद तार आया, "तुरन्त रवाना होकर डा० असारी के निवास-स्थान नं० १ दरयागज मे आकर मुझसे मिलो।"

श्री प्यारेलाल दो दिन बाद उनके सामने जाकर उपस्थित हो गये। नहा-धोकर जब वह आराम कर चुके तब गांधीजी ने उनको अपने पास बुलाया। उनका निबन्ध सामने रखा हुआ था, वह उसे 'यंग इण्डिया' मे प्रकाशित कराना चाहते थे। उन्होने कुछ बाते पूछी, फिर उस लेख को अपनी इस टिप्पणी के साथ छपने के लिए भेज दिया

"हाल ही मे असहयोग करनेवाले एक पंजाबी विद्यार्थी की सुयोग्य रचना।"

दूसरे दिन अपने दल के साथ वह रोहतक के लिए रवाना हो गये। श्री प्यारेलाल वही रह गये। शाम को जब गाधीजी लौटे तो उन्होने इस बात के लिए उन्हे झिडका। श्री प्यारेलाल ने कहा, "मुझसे किसीने साथ चलने के लिए नहीं कहा था।"

गाधीजी बोले, "किसी व्यक्ति की असावधानी के कारण ऐसा हुआ है, फिर भी अपनी सतर्कता से उस व्यक्ति को इस

प्रमाद का भागी होने से बचा लेना तुम्हारा फर्ज था। जब सकोच और विनय कर्त्तव्य-पथ को अवरुद्ध करते हो, तो उन्हे मिथ्या अहता के लक्षण मानकर उनपर विजय प्राप्त करनी चाहिए।"

उसी दिन शाम को महादेवभाई 'यग इण्डिया' के काम से अहमदाबाद चले गये और गांधीजी की निगरानी मे श्री प्यारेलाल की शिक्षा-दीक्षा का कार्य आरम्भ हुआ। किसीको पानी का गिलास देने से पहले बाहर लगा हुआ पानी पोछ दिया जाय, खाना परोसने के लिए हाथ धोने के बाद दरवाजा आदि खोलने का काम उन्ही हाथो से न किया जाय, प्याले मे दूध देने से पहले चम्मच से उसे अच्छी तरह हिला लिया जाय, जिससे उसके नीचे यदि कोई अखाद्य पदार्थ हो तो ऊपर आ जाय, पाण्डुलिपि को सुपाठ्य बनाने के लिए उसमे विराम चिन्ह और अनुस्वार आदि स्पष्ट लिखे जायं, बिछौना कैसे बिछाया जाय, मलमूत्र के काम आनेवाले बर्तन कैसे साफ किये जायं, आदि कुछ ऐसी छोटी-मोटी बाते थी, जो उन्हे थोडे ही दिनो के भीतर सीखनी पडी। सूक्ष्म अध्ययन और निरीक्षण के बाद गाधीजी की सादगी कैसी दुसाध्य कला है, इसका उन्हे पता लग गया। एक बार किसी अवसर पर गांधीजी ने स्वय कहा था, "सादगी ऐसी सहज-साध्य नही है, जैसाकि अधिकाश लोग सोचा करते है।"

आप इतने उछल क्यों रहे थे ?

सन् १९२५ मे पटना मे कांग्रेस दो दलो मे बट गई थी। एक था स्वराज्य-दल, जो कौंसिल-प्रवेश का समर्थन करता था। दूसरा था विधायक दल। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक मे इस बात का उल्लेख करते हुए गाधीजी ने कहा, "अब डा० पट्टाभि अपनी तीखी कलम पर अकुश लगा देगे।"

डा० पट्टाभि सीतारामय्या इस वाक्य का अर्थ समझ गये। उसी बैठक मे एक अन्य अवसर पर उन्होने स्वराज्य दल के विरुद्ध विश्वास भग करने का अभियोग लगाया, तो प० मोतीलाल नेहरू और श्री सत्यमूर्ति क्रुद्ध हो उठे। मोतीलाल नेहरू गरजते हुए बोले, "मुझे कांग्रेस की जरा भी परवा नही है। मै उससे अलग हो जाऊगा।"

उस वर्ष कांग्रेस के अध्यक्ष थे गाधीजी। उन्होने डा० पट्टाभि सीतारामय्या से कहा, "मैं आपकी वक्तृता का प्रदर्शन नही चाहता। आप अब मत बोलिए।"

डा० पट्टाभि चुपचाप अपने स्थान पर आ बैठे और गाधी-जी लगभग बीस मिनट तक मोतीलालजी को उपदेश देते रहे। बोले, "विद्वत्ता मे भले ही आप श्रेष्ठ होगे, किन्तु यदि आप विनय से काम लेने मे चूके, तो अपनी अहता के कारण अवश्य ही किसी दिन जाल मे फस जायेगे।"

उन्होने मोतीलालजी से आग्रह किया कि वह डा० पट्टाभि

से और साथ ही कांग्रेस से क्षमा-याचना करे।

पं० मोतीलाल नेहरू ने, जो अबतक शात हो गये थे, ऐसा ही किया। प्रत्युत्तर मे डा० पट्टाभि भी कुछ बोले और वह मामला वही समाप्त हो गया। दूसरे दिन सवेरे जब डा० पट्टाभि सीतारामय्या गांधीजी से मिलने के लिए गये, तो उन्होने पूछा, "मोतीलालजी की क्षमा-प्रार्थना स्वीकार करते आप इतना उछल क्यो रहे थे?"

बेचारे पट्टाभि! इस प्रश्न का क्या उत्तर देते!

: ४९ :

हिन्दू-मुस्लिम-ऐक्य मेरे बचपन का रसप्रद विषय है

सितम्बर, १९४७ में कलकत्ता मे जब साम्प्रदायिक उत्पात चरम सीमा पर पहुच गया तब गाधीजी ने उसे रोकने के लिए अनशन आरम्भ कर दिया। सभी लोग बहुत चिंतित हो उठे। एक-एक करके तीन दिन बीत गये। उत्पात को रोकने के लिए बहुत प्रयत्न किये गए। हिन्दुओ, मुसलमानो सभीने उनसे उपवास छोड़ देने की प्रार्थना की। वचन दिया कि वे सब आपस मे मिलकर रहने का प्रयत्न करेंगे, लेकिन गाधीजी टस-से-मस नही हुए। चौथे दिन पैंतीस गुण्डो की एक टोली आई। डाक्टर ने उनसे मिलने के लिए मना किया। गाधीजी बोले, "काम की खातिर तो मै मरते दम तक बाते करता रहूगा।"

उन लोगो ने अपना अपराध स्वीकार किया, क्षमा मागी और उपवास छोडने की विनती की।

गाधीजी बोले, "इस तरह उपवास नही छोडा जायगा। तुम सब मुसलमानो मे घूमो। वे लोग सख्या मे कम है। तुम्हे उनकी रक्षा करनी चाहिए। जब मेरी आत्मा मुझसे कहेगी कि तुम उनकी रक्षा करते हो और स्थायी शान्ति कायम हो गई है तो मै उपवास छोड दूगा।"

दो घण्टे बाद गुण्डो की टोली का सरदार आया। उसने भी अपना अपराध स्वीकार किया। कहा, "मुझे सजा दीजिये। मै और मेरी सारी टोली आपकी सजा भुगतने के लिए तैयार है। लेकिन आप उपवास छोड दीजिये।"

गाधीजी बोले, "मेरी सजा यह है कि तुम मुसलमानो मे जाओ और काम करने लगो। मुझे यकीन हो जायगा कि अब तुममे सचमुच परिवर्तन हो गया है, तो मैं तुरन्त उपवास छोड दूगा। लेकिन यह काम तेजी से होना चाहिए, क्योकि मुझे तुरन्त ही पजाब जाना है। पजाब जाने के लिए ही मुझे जीने की इतनी प्रबल इच्छा है। अगर तुम देर करोगे, तो मैं अधिक दिन नही टिक सकूगा।"

सध्या को राजाजी का खत आया, "शहर मे शान्ति है और वातावरण शान्त और प्रसन्न है।" थोडी देर बाद विभिन्न धर्मो के प्रतिनिधियो के साथ नेता लोग आये। उन्होने भी उपवास छोडने की प्रार्थना की। लगभग २५ मिनट तक गाधीजी उनको समझाते रहे। फिर कहा, "मैं आपसे दो सवाल पूछता हूं—(१) क्या आप कह सकते हैं कि अब कभी कलकत्ते मे अशान्ति नही

होगी ? (२) अगर होगी तो आप सब मुझे उसकी रिपोर्ट देने के लिए नही आयेंगे, बल्कि मैं सबकी मृत्यु के समाचार सुनूगा, नही तो जैसा मैने बिहार मे कहा है, उसी तरह आमरण उपवास करूगा। मै किसी धोखे में पडना नही चाहता। अगर आप सही नीयत से मेरी मदद नही करेगे, तो मेरा खून करेगे।"

शहीदसाहब ने तर्क किया, "समझ लीजिये, हम मर जाय तो फिर आपको आमरण उपवास करने की जरूरत क्यो होगी ? आपकी यह प्रतिज्ञा ठीक नही है।"

गांधीजी बोले, "सफेद गुण्डे ही सबकुछ करते है। बाकी इतने बडे शहर मे चोर-डाकू तो बहुत-से होगे। अभी तक ईश्वर ने मुझे ऐसी ताकत नही दी कि मै उनपर विजय पा सकू, लेकिन हिन्दू-मुस्लिम-ऐक्य मेरे बचपन का रसप्रद विषय है। इसलिए कहने का मतलब यह है कि भले ही सारी दुनिया में आग भडक उठे, लेकिन कलकत्ते मे कभी हिन्दू-मुस्लिम झगड़ा नही होना चाहिए। इस बात की अगर आप सब जिम्मेदारी ले और मुझे ऐसा लिख दे, तो मै उपवास छोड दूगा।"

गाधीजी बहुत थक गये थे। सिर में चक्कर आ रहे थे। कभी सोते, कभी माला फिराते थे और राम-राम भजने लगते थे। सब लोग दूसरे कमरे मे चले गये। एक घण्टे तक उनमे चर्चा होती रही। अन्त मे उन लोगो ने लिख दिया, "अब कलकत्ते मे सम्पूर्ण शान्ति बनी रहेगी और अगर कुछ भी होगा तो उसकी जिम्मेदारी हमारे सिर पर होगी। हम पहले मरेगे।"

उसपर सभी नेताओ ने हस्ताक्षर किये। तब गांधीजी ने प्रार्थना करने के लिए कहा और रात को ठीक सवा नौ बजे सुहरा-

वर्दीसाहब के हाथ से मौसम्बी के रस का प्याला लेकर अपना उपवास तोडा, लेकिन रस पीने से पहले एक बार उन्होने फिर अपने मन का दर्द उनके सामने रखा, "कलकत्ता ही सारे हिन्दुस्तान की चाबी है। सारी दुनिया जल जाय, तो भी कलकत्ता को नही जलना चाहिए। ईश्वर सबको सन्मति दे। बाकी आपके और मेरे बीच मे भगवान तो पडा ही है।"

इतना कहकर उन्होने रस पीना शुरू किया।

: ५० :

आपका पांव अब कैसा है ?

दिल्ली मे हरिजन उद्योग शाला स्थापित करने की योजना बन रही थी उन्ही दिनो गाधीजी दिल्ली आये। 'सस्ता साहित्य मण्डल' के मन्त्री मार्तण्ड उपाध्याय दिल्ली मे ही रहते थे। उनके पिता पण्डित सिद्धनाथ उन्हीके पास थे। हरिभाऊ उपाध्याय के कारण वह गाधीजी से खूब परिचित थे। एक दिन उन्होने मार्तण्डजी से कहा, "गाधीजी आये है, मुझे उनसे मिला दो।"

यह सुनकर मार्तण्डजी कुछ घबरा गये, क्योकि वह जानते थे कि पिताजी हरिजनो के प्रश्न को लेकर गाधीजी से सहमत नही थे। वह मानते थे कि इन ढेढ-भगियो को सिर पर बैठाकर गाधीजी धर्म का सत्यानाश कर रहे है। इसलिए उन्होने कोई निश्चित उत्तर नही दिया। दफ्तर चले गये। लेकिन जैसे ही सध्या को लौटे

तो पाया, पिताजी स्वय ही तागे मे बैठकर गांधीजी से मिलने चले गये है। भागे-भागे वह भी गाधीजी के निवास-स्थान पर पहुचे। पडितजी उस समय जीने के पास खडे हुए थे और गांधीजी ऊपर की मंजिल में चरखा कात रहे थे। स्वयसेवक के द्वारा पंडितजी ने सदेशा भेज दिया था, लेकिन गाधीजी तो उनको पडित सिद्धनाथ के नाम से नही पहचानते थे। कहला दिया कि प्रार्थना में जायगे तब मिल लेगे। इसलिए बेचारे नीचे ही खड़े थे। मार्तण्डजी सीधे ऊपर पहुंच गये। प्रणाम किया। गाधीजी पहचानकर बोले, "क्यों, क्या करते हो? कैसा चलता है? हरिभाऊ कैसा है? पिताजी कहां है?"

मार्तण्डजी ने कहा, "पिताजी आपसे मिलने आये है और नीचे खड़े है।"

गाधीजी बोले, "अरे, नीचे क्यो खड़े है, बुला लाओ उन्हे!"

मार्तण्डजी नीचे आकर पिताजी को ऊपर ले चले। मन-ही-मन डर रहे थे कि अब पिताजी के क्रोध का विस्फोट होगा। वह गाधीजी के कटु आलोचक हैं, फिर आज तो उन्हे आधा घण्टा खड़ा रहना भी पडा है। ऊपर पहुचकर पिताजी ने कहा, "जै रामजी की, गाधीजी।"

गाधीजी बोले, "क्यो पंडितजी, कैसा स्वास्थ्य है? आपका पांव अब कैसा है? ऊपर जीना चढने मे तकलीफ तो नही हुई?"

पडितजी ने उत्तर दिया, "नही, महात्माजी, आपकी कृपा से सब अच्छा है। पैर भी अब अच्छा है, लेकिन पैर की आपने बड़ी याद रखी। मैं तो दस-ग्यारह वर्ष बाद मिला हूं आपसे।"

गाधीजी बोले, "हां, साबरमती में जब आपको देखा था, तो

आपके वाये पैर मे कुछ दर्द है ऐसा लगा था। आप ज़रा-ज़रा लगड़ा रहे थे।"

: ५१ :

सत्य के साधक को ऐसे प्रमाद से बचना चाहिए

एक दिन गाधीजी सूत कातने के वाद उसे लपेटे पर लपेटने जा रहे थे कि अचानक किसी आवश्यक काम से उन्हे बाहर जाना पड़ा। जाते समय उन्होंने अपने स्टेनो-टाइपिस्ट श्री सुवैया से कहा, "सूत लपेटे पर उतार लेना, तार गिन लेना और प्रार्थना के समय से पहले मुझे वता देना।"

सुवैया ने उत्तर दिया, "जीहां, मैं कर लूगा।"

गाधीजी चले गये। सांध्य-प्रार्थना के समय आश्रमवासियो की हाजिरी ली जाती थी। प्रत्येक उपस्थित व्यक्ति अपना नाम वोले जाने पर ॐ कहता था। उसी समय उसने कितने सूत के तार काते हैं, उनकी सख्या भी वता देता था। उस सूची मे सवसे पहला नाम गाधीजी का था। उस दिन भी नियमानुसार सव लोग प्रार्थना के लिए इकट्ठे हुए। गाधीजी का नाम पुकारा गया। उन्होने उत्तर मे कहा, ॐ।

लेकिन सूत के तारो की संख्या तो उन्हे मालूम ही नही थी। उन्होने सुवैया की ओर देखा। सुवैया चुप रह गये। गाधीजी भी चुप रहे।

हाजिरी समाप्त हो गई। प्रार्थना भी समाप्त हो गई। प्रार्थना के बाद गाधीजी आश्रमवासियो से कुछ बातचीत किया करते थे, लेकिन उस दिन गाधीजी बहुत गम्भीर थे, जैसे उनके अन्तर मे गहरी वेदना हो, जैसे मन मे मन्थन चल रहा हो। उन्होने व्यथा-भरे स्वर में कहना आरम्भ किया, "मैने आज भाई सुबैया से कहा था कि मेरा सूत उतार लेना और मुझे तारो की सख्या बता देना। मैं मोह मे फस गया। सोचा था सुबैया मेरा काम कर लेगे, लेकिन यह मेरी भूल थी। मुझे अपना काम आप करना चाहिए था। मैं सूत कात चुका था, तभी एक जरूरी काम सामने आ गया और मैं सुबैया से सूत उतारने को कहकर बाहर चला गया। जो काम मुझे पहले करना था, वह नही किया। भाई सुबैया का इसमे कोई दोष नही, दोष मेरा है। मैंने क्यो अपना काम उनके भरोसे छोडा? मुझसे यह प्रमाद क्यो हुआ? सत्य के साधक को ऐसे प्रमाद से बचना चाहिए। उसे अपना काम किसी दूसरे के भरोसे नही छोडना चाहिए। आज की उस भूल से मैंने एक बहुत बड़ा पाठ सीखा है। अब मैं फिर ऐसी भूल कभी नही करूगा।"

हम सूर्य के सामने आंखें न खोल सकें तो...

उस वर्ष बम्बई में श्रीमती ऐनी बेसेन्ट की वर्ष-गाठ मनाई जा रही थी। उस उपलक्ष मे वहा जो सभा आयोजित की गई, उसके सभापति थे गाधीजी। यह बात सभी जानते है कि इन दोनो महान् व्यक्तियो मे कुछ बातो को लेकर तीव्र मतभेद था। वह मतभेद उन दिनो और भी उग्र हो उठा था। ऐसे वातावरण मे गाधीजी का सभापति होना सबके लिए कौतूहल का कारण था। तरह-तरह की कल्पनाए लोग करने लगे थे—न जाने अब क्या होगा ? शायद गाधीजी श्रीमती बेसेन्ट की खूब खबर लेगे।

सभा का कार्य ठीक समय पर प्रारम्भ हुआ। गाधीजी अध्यक्ष-पद से बोलने के लिए खडे हुए। सहज भाव से उन्होने कहा, "मैं श्रीमती बेसेन्ट को बहुत दिनो से जानता हू। कई वर्ष पहले लन्दन के विक्टोरिया हाल मे इनका भाषण सुना था। तभी से मै इनका आदर करता हू। इनकी सेवाए इतनी अधिक है कि शेषनाग की तरह हजार जबान मिलने पर भी मै उनका वर्णन नही कर सकूगा। आज मेरे और उनके बीच एक खास प्रकार का मतभेद है, लेकिन मै आपसे अपने मन की बात कहता हू। जब-जब मेरे और उनके बीच मे मतभेद हुआ है तब-तब मैंने उसे अपनी ही गलती माना है। अगर हम पूरी तरह सूर्य के सामने आखे न खोल सके, तो यह सूर्य का दोष नही, हमारी

पुतलियो का दोष है। इनके और मेरे बीच जो मतभेद है, उसकी व्याख्या मैं इसी प्रकार करता हू।"

: ५३ :

यह कहां का इंसाफ है ?

उस वर्ष लाहौर में काग्रेस अधिवेशन के साथ-साथ चर्खा-सघ की ओर से खादी प्रदर्शनी भी होनेवाली थी। उसके लिए चित्र आदि तैयार करने का भार श्री रावजीभाई पटेल पर था। उन्हे ऐसे चित्रो की आवश्यकता थी, जो अनपढ़ जनता की समझ में भी आ जाय।

आश्रम मे ऐसा कोई चित्रकार नही था। नगर के एक चित्रकार द्वारा ही वे चित्र तैयार कराये गए। वे बारह चित्र थे। उनका मूल्य हुआ १२० रुपये।

गाधीजी उन चित्रो को देखकर बहुत प्रसन्न हुए। पूछा, "कितना खर्च हुआ ?"

श्री पटेल नें उत्तर दिया, "१२० रुपये।"

यह सुनकर गाधीजी बहुत दुःखी हुए। बोले, "ये चित्र तो किसी धनवान के घर को सुशोभित करनें लायक है। वे ही इतने पैसे दे सकते है। हम तो दरिद्र-नारायण के प्रतिनिधि है। हमारे लिए इतने पैसे खर्च करके चित्र तैयार करवाना उचित नही है। अगर हमने खादी प्रदर्शनी के लिए किसीसे कहा होता तो कोई-न-कोई ऐसा मिल ही जाता।" फिर सहसा पूछा, "ये चित्र

कितने दिनो मे तैयार हुए है ?"

श्री पटेल ने उत्तर दिया, "लगभग बारह दिन लगे है।"

वह बोले, "तो मेहनताना दस रुपये रोज पडा। आज हिन्दुस्तान मे कितने लोगो को दस रुपये रोज मिलते है! कातने वाले और बनजारे को क्या मिलता है? यह तुमने किसीसे पूछा है? इस गरीब मुल्क मे मजदूरी उतनी ही निश्चित करनी चाहिए, जिससे कोई भूखो न मरे।"

उस समय बुनकर श्री रामजीभाई आ गये। गाधीजी ने उनसे पूछा, "क्यो रामजी, तुम रोज कितने गज बुनते हो और उससे तुम्हे क्या मिलता है?"

रामजीभाई ने उत्तर दिया, "बापू, लगातार काम करे तब महीने मे बडी कठिनता से पन्द्रह-बीस रुपये मिल जाते है।"

श्री पटेल की ओर देखकर गाधीजी बोले, "देखो, सारा दिन काम करने पर भी रामजीभाई को आठ आने से ज्यादा नही मिलते और एक चित्रकार को दस रुपये मिल जाते है! यह कहा का इन्साफ है? मेरा बस चले तो हर तरह के मजदूर के लिए एक आना घटा निश्चित कर दू। वह चाहे वकील हो या डाक्टर या पुलिस अधिकारी या सरकारी अफसर, कोई भी क्यो न हो! इस देश मे हर व्यक्ति को आठ घण्टे काम करना चाहिए।

ज़रा वक्त भी लग जाय तो कोई बात नहीं

'भारत-छोडो'-आन्दोलन के समय गाधीजी जब जेल से छूटकर आये तो उनके कई साथी फिर से जेल जाने के लिए उत्सुक थे। श्री रावजीभाई पटेल उन्हीमे से एक थे। वह गाधीजी के बहुत पुराने साथी थे। इस सम्बन्ध मे विचार-विनि-मय करने के लिए वह उनके पास पहुचे। आने से पहले उन्होने गाधीजी को तार दे दिया था। उन दिनो वह बहुत व्यस्त थे। नही चाहते थे कि ये लोग वहा आवे। लेकिन सभवत गाधीजी का तार समय पर नही मिला और ये लोग पहुच गये।

सायकाल की प्रार्थना के समाप्त हो जाने पर उन्होने गांधीजी को प्रणाम किया। गाधीजी बोले, "इस बारे मे तुम प्यारेलाल से बात कर लो। वह तुम्हे सबकुछ बता देगा। फिर भी मिलने की जरूरत समझो, तो जरूर मिलना।"

लेकिन श्री रावजीभाई पटेल प्यारेलालजी से बात करके सतुष्ट न हो सके। गांधीजी ने उन्हे दूसरे दिन ठीक चार बजे मिलने के लिए बुलाया। किसी कारणवश वे लोग दस-पन्द्रह मिनट देर से पहुचे। गाधीजी बाट जोहते बैठे थे। उस समय अन्य कई व्यक्ति भी उनके पास बैठे थे। उन दिनो वह बहुत-से महत्त्वपूर्ण कार्यो मे लगे थे। वायसराय से पत्र-व्यवहार हो रहा था। फिर भी उन्होने श्री पटेल से कहा, "जरा ठहरो, मै इन कामवालो से वातचीत कर लू।"

आखिर गाधीजी इन लोगो की ओर मुखातिब हुए। बाते करते हुए पाच मिनट बीत चुके थे कि सुशीलाबहन बोल उठी, "बापू, पाच मिनट हो गये, अब बन्द कीजिये।"

गाधीजी नियम के पाबन्द थे। फिर ये लोग देर से भी पहुचे थे। वह वही समाप्त कर सकते थे, लेकिन बोले, "मेरे हृदय मे जो कुछ चल रहा है, वह इनसे नही तो और किससे कहूगा! आश्रम के पुराने आदमी है। जरा वक्त भी लग जाय तो कोई बात नही। सब बाते इन्हे अच्छी तरह समझानी चाहिए और देख, इस बात मे ही तूने मेरे पाच मिनट ले लिये।"

और फिर श्री पटेल की ओर मुखातिब हो कर बोले, "तुमने जेल जाने की बात कही, वह ठीक है, लेकिन जबतक मै बाहर रहू, तबतक तुम भी बाहर रहो, तो अच्छा है। मै जब गिरफ्तार हो जाऊ तब जो तुम्हे ठीक लगे, करना। ८ अगस्त के प्रस्ताव के अन्तिम भाग मे साफ-साफ बता दिया गया है कि वक्त पडने पर हर आदमी अपना नेता है।"

· ५५ ·

मंत्री तो जनता के सेवक हैं

देश के विभाजन से कुछ दिन पूर्व गाधीजी दिल्ली से कलकत्ता जा रहे थे। मार्ग मे पटना स्टेशन पर मन्त्रिमडल के सभी मन्त्री उनसे मिलने आये। जनता की भी अपार भीड थी। खूब चन्दा इकट्ठा किया। तबतक गाधीजी मन्त्रियो से बाते करते रहे।

रेल के रवाना होने का समय आ गया। परन्तु स्टेशन मास्टर नौकर आदमी ठहरे। मत्रिगण गाधीजी से बातो में व्यस्त हो, तो वह गाडी कैसे चलाये! साहस करके वह गाधीजी के पास आये, बोले, "रेल के चलने का समय तो हो गया है, परन्तु आपको जरूरत हो तो रोकू। जिस समय कहे उस समय रवाना करू!"

कोई मन्त्री इस प्रश्न का उत्तर दे उससे पहले ही गाधीजी बोल उठे, "आप यह पूछने आये है, इसमें मै आपका दोष नही पाता। आपको तालीम ही ऐसी मिली है। लेकिन आप जैसे यहा पूछने आये है वैसे क्या हर डिब्बे मे पूछने जायगे ? यदि वहा न जाय तो आपको यहा भी न आना चाहिए था। मै कोई हाकिम नही हूं। ये मत्री आपके हाकिम जरूर है, परन्तु ये सत्ता के भाव से मुझसे मिलने नही आये। आपका फर्ज है कि आप कानून की रू से जब गाडी रवाना करनी है तब सीटी वजा दे। हा, आपके अफसरो ने किसी कारण से आपको कोई लिखित कार्यक्रम दिया हो तो बात दूसरी है। परन्तु यदि ऐसा नही है तो आपको सदा की तरह काम करते रहना चाहिए। मत्रियों को देखकर आपको घबराना नही चाहिए। ये तो जनता के सेवक है। आपको इनके सामने निडर बनना चाहिए। मत्रियों को भी आप लोगो को नौकर न समझकर छोटे भाई समझना चाहिए। तभी हम सच्चे लोकतन्त्र का आनन्द लूट सकेगे। .. आपको उलाहना नही देता, आप दु ख न माने। परन्तु यह हम सबको शिक्षा देनेवाला मौका मिल गया, इसलिए इस सम्बन्ध मे न कहू तो आपको क्या पता चले और (विनोद मे) मै तो

शिक्षक ठहरा। इसलिए मेरे स्वभाव मे ही यह चीज है कि जब मेरी अन्तरात्मा को भूल मालूम हो तब उसे सुधारे बिना मुझसे नही रहा जाता। चलिये, आपको इतने मिनट दिये। अब आप अपनी सुविधा से गाडी रवाना करने मे सकोच न कीजिये।"

स्टेशन-मास्टर ने गाधीजी को प्रणाम किया। वह बहुत खुश थे। बोले, "महात्माजी की कैसी महानता और विशालता है। नौकरी लगने के बाद तैतालीस वर्ष की उम्र मे ऐसी निडरता और बडे अनुशासन का यह पहला ही उदाहरण है, इसीलिए तो महात्माजी देश के राष्ट्रपिता कहलाते है।"

: ५६ :

इतना-सा पेंसिल का टुकड़ा सोने के टुकड़े के बराबर है

सन् १९४७ मे गाधीजी जब बिहार की यात्रा कर रहे थे तो मनु ने देखा कि उनकी पेसिल बहुत छोटी हो गई है। उसने उसकी जगह नई पेसिल रख दी। रात को साढे बारह बजे गाधीजी ने उसे उठाया। कहा, "मेरा वह पेसिल का टुकडा तो ले आओ।"

मनु बेचारी कुछ नीद मे थी। घबरा गई। लेकिन वह टुकडा तो ढूढना ही था। उसे याद नही था कि वह उसने कहा रखा है। सवा बज गया तो गाधीजी अन्दर आये और पूछा, "क्यो, नही मिलती ?"

मनु ने कहा, "बापूजी, कही-न-कही रखकर मै भूल गई हू।"

गाधीजी बोले, "ठीक है, सवेरे ढूढ लेना। अब सो जाओ।"

सवेरे साढे तीन बजे प्रार्थना हुई। गांधीजी ने फिर पेंसिल की याद दिलाई। बडी कठिनता से बगल-झोले की जेब में से वह पेंसिल निकली। मनु ने उसे तुरन्त गाधीजी को दे दिया। शान्त भाव से गाधीजी ने कहा, "ठीक है, मिल गई तो अब रख दो। अभी जरूरत नही है।"

मनु को बडा क्रोध आया। इतना परेशान किया। खुद भी परेशान हुए और जब मिल गई तो कहते है अब नही चाहिए। खैर, कुछ भी हो, उस टुकड़े को उसने संभालकर रख दिया। लगभग दो हफ्ते बाद गाधीजी दिल्ली लौट गये। लार्ड माउन्ट-बेटन से देश के भविष्य के सम्बन्ध मे चर्चा चल रही थी। उन्हे जरा भी फुर्सत नही होती थी, लेकिन अचानक रात को बारह बजे उन्होने मनु को उठाया। कहा, "पटना में मैंने तुम्हे काली पेंसिल का टुकडा दिया था, वह लाना तो।"

मनु तुरन्त वह टुकडा ले आई। सभालकर जो रखा हुआ था। गाधीजी बोले, "अब तुम मेरी परीक्षा में उत्तीर्ण हो गई। तुम जानती हो कि हमारा देश कितना गरीब है। हजारों गरीब बालको को पेंसिल का इतना छोटा टुकडा भी लिखने को नही मिलता। तब हमे क्या अधिकार है कि इस प्रकार जहां-तहा पेंसिल का टुकडा रख दे अथवा बेकार समझकर फेंक दे। अभी तो बहुत काम दे सकता है। हमारे देश में इतना-सा पेंसिल का टुकड़ा सोने के टुकडे के बराबर है। यह जानकर तुम्हे पहले ही

दिन उसे सभालकर रखना चाहिए था, परन्तु तुमने लापरवाही से इसे कही रख दिया था, क्यो कि तुम्हारा खयाल होगा कि बापू के पास बहुतेरी पेंसिले आती है। आज तुम तुरन्त ले आई, इसलिए परीक्षा मे पास हो गई। मुझे अब विश्वास हो गया कि तुम्हारे हाथ मे चीजे सौपी जा सकती है।"

संदर्भ

इस पुस्तक के प्रसंग जिन पुस्तको से सम्पादित रूप मे लिये गए हैं, उनके नाम, प्रसगो की संख्या तथा लेखको के नाम साभार दिये जा रहे हैं :

आत्मकथा (गाधीजी) ४०
एकला चलो रे (मनुबहन गाधी) २५
ऐसे थे बापू (आर० के० प्रभु) २
कलकत्ते का चमत्कार (मनुबहन गाधी) ४६
कुछ देखा, कुछ सुना (घनश्यामदास बिडला) १४
गाधीजी एक झलक (श्रीपाद जोशी) १५, १७, १६, ४१
गाधी . व्यक्तित्व, विचार और प्रभाव (सकलन) मार्तण्ड उपाध्याय ५०
गाधीजी और मजदूर प्रवृत्ति (शकरलाल बैंकर) ६
गाधीजी के जीवन-प्रसग (स० चद्रशकर शुक्ल) १०, ४२, ४३, ४४, ४५, ४६, ४७, ४८
गाधीजी के सस्मरण (शातिकुमार) १
गाधीजी के सम्पर्क मे (स० चद्रशकर शुक्ल) ३६, ५२, ५३, ५४
गृहणी (मार्च १६४०) १६
बापू की झाकिया (काका कालेलकर) ७
बापू की मीठी-मीठी बातें (साने गुरुजी) ३८
बापू की विराट वत्सलता (काशिनाथ त्रिवेदी) ५१
बापू के जीवन-प्रसग (मनुबहन गाधी) ८, ३०
बिहार की कौमी आग मे (मनुबहन गाधी) २६, ३१, ३२, ३४, ३६, ५५, ५६